शैक्षिक मंथन

(द्विभाषी मासिक)

शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका

वर्ष : 6 अंक : 12 1 जुलाई 2014

(आषाढ़-श्रावण, विक्रम संवत् 2071)

संरक्षक

मुकुन्द कुलकर्णी

प्रो.के.नरहरि

❖

परामर्श

डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल

प्रो. जगदीश प्रसाद सिंघल

❖

सम्पादक

प्रो. सन्तोष पाण्डेय

❖

सम्पादक मण्डल

विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी

भरत शर्मा

❖

प्रबन्ध सम्पादक

महेन्द्र कपूर

❖

व्यवस्थापक

बजरंग प्रसाद मजेजी

❖

प्रेषण प्रभारी

बसन्त जिन्दल 9414716585

प्रकाशकीय कार्यालयः

82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,

जयपुर (राज.) 302001

दूरभाषः 9414040403,9782873467

दिल्ली ब्यूरो

शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,

कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053

दूरभाषः 011-22914799

E-mail:

shaikshikmanthan@gmail.com

Visit us at :

www.shaikshikmanthan.com

एक प्रति 15/-

वार्षिक शुल्क 150/-

आजीवन (दस वर्ष) 1200/-

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर

शैक्षिक मंथन मासिक

में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल

का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

वर्तमान में शिक्षक की भूमिका - डॉ. श्रीमती रेखा भट्ट

हमारे पूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने भी अपनी सफलता का श्रेय अपने शिक्षकों को दिया है। अतः शिक्षक अपनी भूमिका और स्वयं को इस प्रकार प्रतिष्ठित करें कि विद्यार्थी भी अपने कॅरियर में शिक्षण को वैकल्पिक या अन्तिम विकल्प के रूप में चयन नहीं करें। वह प्राथमिकता से शिक्षण कार्य को अपने कॅरियर के रूप में अपनाएं तथा उसमें शिक्षक के प्रति निष्ठा का भाव स्वतः जाग्रत हो।

अनुक्रम

4.	परिवर्तन के दौर में शिक्षा व शिक्षक	- सन्तोष पाण्डेय
6.	शिक्षक बनें गुरु	- विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी
9.	नए दौर में शिक्षक की बदलती भूमिका	- बजरंगी सिंह
11.	Towards making of a 'Guru'	- TS Girishkumar
13.	Challenges for a Teacher	- Dr. A. K. Gupta
18.	Weakest Link in Education Chain	- Subodh Varma
20.	बाजार में शिक्षक	- संजीव शर्मा
22.	आशंका और उम्मीद के भंवर में उच्च शिक्षा	- शशांक द्विवेदी
24.	सफेद हाथी बन रहा यूजीसी	- प्रो. एस.पी. सिंह
26.	शिक्षा को बाजार भरोसे मत छोड़िए	- अनिल सद्गोपाल
28.	भाषाई गुलामी से मुक्ति के संकेत	- प्रमोद भार्गव
30.	मानव संसाधन मंत्रालय के समक्ष चुनौतियां	- अश्विनी कुमार
32.	शिक्षा की सूरत	- के. सी. बब्बर
34.	शिक्षक की जागरुकता से ही शैक्षिक उन्नयन	- बजरंग प्रसाद मजेजी
36.	Last edu policy came in '86' India...	- Akshaya Mukul
38.	Post-Modi, right wing seeks to secure ...	- Deeptiman Tiwary
42.	गतिविधि	

Lessons for Liberals

❑ **T. K. Arun**

The opponents of secular India work round the clock, seven days a week, 52 weeks a year and do not stop. They work among tribal people, run schools in rural areas and small towns, run charities that deliver "social service", act as community volunteers at religious functions that liberals sneer at. Activists of the Sangh Parivar are, indeed, like fish in the water — ubiquitous, at home and at unceasing work. Secularists, in contrast, have no such energy , organization or passion driving them. They don't even know what secular politics is. For example, Sonia Gandhi's little chat with Imam Bukhari of Delhi's Jama Masjid in the run-up to the elections is reported by her partymen as an attempt to prevent division of the "secular vote". Are Muslim votes the same as the secular vote?

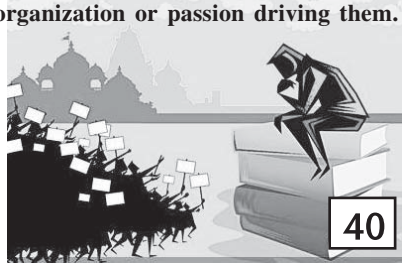

परिवर्तन के दौर में शिक्षा व शिक्षक

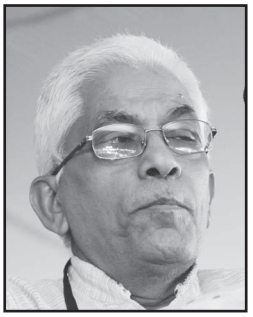

शिक्षा में गहनता लाने में भाषा का भारी योग होता है। मातृ भाषा ही शिक्षा का सशक्त माध्यम हो सकती है। अंग्रेजी को रोजगार व ज्ञान प्राप्ति का साधन मानने वालों संख्या में लगातार वृद्धि से सभी को समान अवसर नहीं मिल पा रहे हैं। प्रधानमंत्री ने शपथ ग्रहण करने के साथ ही हिन्दी में संवाद करने से सकारात्मक संदेश गया है। आवश्यकता है कि शिक्षा में भारतीय भाषाओं के प्रयोग और पुष्ट किया जाये। शिक्षक ही आज गुरु के रूप में स्थापित है। ऐसे में शिक्षा की चुनौतियों से निपटने में शिक्षकों की भूमिका और भी व्यापक हो जाती है। गुरु-शिष्य परंपरा का पालन करते हुये शिष्यों को संस्कारयुक्त ज्ञान से परिचित कराने की भूमिका शिक्षक को ही निभानी है।

❑ **सन्तोष पाण्डेय**

संपादकीय

अनेक दशकों के बाद मतदान ने किसी एक दल को स्पष्ट जनादेश एवं गठबंधन को विशाल बहुमत दिया है। गत एक दशक विशेषकर पिछले पाँच वर्षों में देश ने जिस प्रकार की कमजोर, लाचार, नीति निर्णय की पंगुता, भ्रष्टाचार में आकण्ठ डूबी सरकार को देखा। निरन्तर गिरती अर्थव्यवस्था, अति तीव्र कीमत वृद्धि, आर्थिक विकास दर व विदेशी व्यापार में भारी गिरावट, अनुत्पादक व्यय में बेतहाशा वृद्धि से जन जीवन त्रस्त हो गया। देश के जन मानस में इन सबके प्रति तीव्र आक्रोश व असंतोष व्याप्त था, जो अनेक भ्रष्टाचार विरोधी आन्दोलनों के माध्यम से प्रकट हो रहा था। जनता का मानस सरकार से मुक्ति पाने का बन चुका था। देश जात-पात, वर्ग, क्षेत्रवाद, साम्प्रदायिक बनाम धर्मनिरपेक्षता की बहस से ऊपर उठकर कुशासन से मुक्ति के लिये व्याकुल था।

परन्तु ये सभी हाल ही के मतदाताओं के निर्णय की विशेषता नहीं है। इस विशाल व स्पष्ट जनादेश की वास्तविक विशेषता है कि संपूर्ण देश ने एक राष्ट्रीय बहस जो मुद्दों के सकारात्मक पक्ष से संबंधित थी, के द्वारा देश में सुशासन, आर्थिक विकास, आन्तरिक व बाह्य सुरक्षा की दृष्टि से सबल भारत जो भारतीयों के आत्मसम्मान व राष्ट्रीय गौरव को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आभास करा सके, पर निर्णय दिया है। जातिविशेष, धर्मविशेष पर आधारित व धर्मनिरपेक्षता की आड़ में तुष्टीकरण को सर्वोच्च मानने वाले राष्ट्रीय व क्षेत्रीय दलों को पूर्णत: ठुकरा दिया। गिनी चुनी क्षेत्रीय पार्टियाँ ही इस झंझावत में जीवित रह पायी है। देश में अनेक वर्षों से सरकार की नीतियों व निर्णयों को विचारधारा के आधार पर सरकार में रहकर व बाहरी रूप में राजनीतिक दलों के रूप में प्रभावित करनेवाली वामपंथी (कम्युनिष्ट) पार्टियां पूरी तरह से हाशिये पर आ चुकी हैं। देश ने प्रधान मंत्री श्री नरेन्द्र मोदी में विश्वास व्यक्त करते हुये उनके विकास, सामाजिक न्याय, सुशासन, भ्रष्टाचार मुक्त समाज के निर्माण, कृषि, उद्योग, व्यापार, शिक्षा, रोजगार, सामाजिक सुरक्षा, नारी सम्मान सहित प्रस्तुत कार्यक्रमों पर स्वीकृति की मोहर लगायी है। सम्पूर्ण देश में एक आशा व विश्वास का वातावरण बना है। यह वातावरण 1967 के बाद पहली बार बना है। देश को पुन: विकास के मार्ग पर ले जाने का माहौल बना है। यही वह परिवर्तन का दौर है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को सोचना होगा कि वह विकसित, सबल, सुरक्षित, सुशासन युक्त समाज के निर्माण में किस प्रकार योगदान दे सकता है।

नई सरकार को बने एक माह से अधिक समय हो चुका है। सरकार ने अभी तक लिये गये निर्णयों से जनता में विश्वास पहले से अधिक हुआ है। सरकार ने तेजी से जनता से किये गये वादों की पूर्ति के लिये कार्यक्रम बनाने प्रारंभ कर दिये हैं। भारत को विकास की राह पर ले जाने का एक सशक्त माध्यम शिक्षा है। शिक्षा के क्षेत्र में भी आशावाद का संचार हुआ है। शिक्षा की दशा व दिशा पर गंभीर मंथन प्रारंभ हुआ है। शिक्षा के क्षेत्र में होने वाले परिवर्तनों में शिक्षा के प्रति सकारात्मक व रचनात्मक सहयोग अपेक्षित है। शिक्षा के उत्थान, प्रसार व प्रचार के लिये अनेक आयोग व समितियों का गठन होता रहा है व उनके सुझावों पर अनेक कार्यक्रम अपनाये गये हैं। तीन दशक पूर्व देश में व्यापक बहस व विचार मंथन के उपरांत राष्ट्रीय शिक्षा नीति संसद में प्रस्तुत की गई। परन्तु 20 वीं सदी के नवें दशक में उदारवादी नीतियों को अपनाने, वैश्वीकरण तथा वैश्विक सामाजिक व आर्थिक नीतियों के साथ कदम ताल करने की आवश्यकता से शैक्षिक परिदृश्य में परिवर्तन हुआ है। देश व समाज के दृष्टिकोण में बड़ी बदल हुई है। उदारीकृत नीतियों ने शिक्षा क्षेत्र में निजी उद्यम के प्रवेश का मार्ग खोला। तत्कालीन सरकारों द्वारा शिक्षा पर कम ध्यान देने तथा सीमित संसाधन आवंटन के कारण बहुसंख्यक सरकारी विद्यालयों, कॉलेजों व विश्वविद्यालयों में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा देने के प्रयास कमजोर पड़े हैं। निजी उद्यम ने प्रारंभिक प्रवेश से प्राप्त सफलता से शिक्षा एक लाभरहित सामाजिक सेवा के स्थान पर एक बड़े संगठित व लाभदायक उद्योग में परिवर्तित हो गई । अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कम्प्यूटर के बढ़ते उपयोग, इंटरनेट के विस्तार व पूँजी के बल पर विविध प्रकार की पाठ्य सामग्री के विस्तार व ज्ञान के विस्फोट में अंग्रेजी को मुख्यता प्रदान होने तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर व ज्ञान के प्रसार हेतु अंग्रेजी को अनिवार्य मानने की मानसिकता से पब्लिक स्कूलों, अंग्रेजी माध्यम के महाविद्यालयों की संख्या तेजी से बढ़ी है। सरकारी

संसाधनों की अल्पता तथा सभी क्षेत्रों में शिक्षा सुविधा के विस्तार व नये-नये ज्ञान के क्षेत्रों में शिक्षित करने के आधार पर निजी विश्वविद्यालयों की देश में बाढ़ आ गई। नि:संदेह अनेक पब्लिक स्कूलों, कॉलेजों व निजी विश्वविद्यालयों ने शिक्षा के विस्तार व गुणात्मक शिक्षा को प्रदान करने में योग दिया। परन्तु वृहद दृष्टिपात किया जाय तो शिक्षा को बहुत मँहगा बनाकर छात्रों व अभिभावकों का शोषण किया है। केवल यही नहीं ठेके पर अस्थायी शिक्षकों की नियुक्ति व्यवस्था को इतना पुष्ट किया है कि अब सरकार भी ठेके पर अस्थायी शिक्षकों द्वारा काम चला रही है। इन सबसे न तो शिक्षा के व्यापक उद्देश्य ही पूरे हो पा रहे हैं, और न ही गुणवत्तायुक्त शिक्षा का लक्ष्य पूरा हो पा रहा है। इनके विस्तार से सरकार द्वारा संचालित स्कूल, महाविद्यालय व विश्वविद्यालय दोयम समझे जाने के कारण तुलनात्मक रूप से कमजोर हैं। शिक्षा को मौलिक अधिकारों में शामिल करने तथा 14 वर्ष की आयु के समस्त बच्चों को निशुल्क व अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा प्रदान करने के कानून ने स्थिति को जटिल बनाया है। सर्व शिक्षा अभियान, मध्याह्न भोजन योजना के माध्यम से शिक्षा के विस्तार का कार्यक्रम भी लक्षित सफलता को प्राप्त नहीं कर पाया है। लाखों बच्चे अभी भी शिक्षा से वंचित हैं। पाठ्यचर्या को अद्यतन करने, नैतिक शिक्षा को अनिवार्य बनाने व शारीरिक शिक्षा को आवश्यक करने का लक्ष्य भी शैशवावस्था में ही है। सम्पूर्ण देश में तीव्र आर्थिक, सामाजिक परिवर्तनों ने लोगों की सोच को बदला है। आर्थिक विकास के कारण कृषि, उद्योग, व्यवसाय व सेवा क्षेत्र की बदलती आवश्यकताओं के अनुरूप मानव संसाधन तैयार करना एक बड़ी चुनौती है। ये सभी इस बात के संकेतक हैं कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति की समीक्षा की जाये। शिक्षा व्यवस्था में आमूल-चूल परिवर्तन किये जाये। देश की मानव संसाधन विकास मंत्री भी मानती हैं कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति का पुनर्निर्धारण होना चाहिये। इस दृष्टि से राष्ट्रीय शिक्षा आयोग को गठित किया जाना समय की माँग है। काफी लम्बे अर्से से यह लक्ष्य दोहराया जाता रहा है कि शिक्षा पर सकल राष्ट्रीय उत्पाद का 6 प्रतिशत न्यूनतम रूप में व्यय किया जाना चाहिये। यह कभी इस लक्ष्य के आस-पास भी नहीं पहुँच पाया है। मानव संसाधन विकास मंत्री भी अपना मन्तव्य व्यक्त कर चुकी है कि आगामी वर्षों में शिक्षा पर 6 प्रतिशत व्यय का लक्ष्य अवश्य ही पूरा किया जायेगा। बिना वित्तीय संसाधनों का आवंटन बढ़ाये शिक्षा का लक्ष्य प्राप्त नहीं हो सकता।

शिक्षा व्यवस्था की उपयोगिता इस बात पर निर्भर करती है कि क्या पढ़ाया जाय व शिक्षा के ढ़ाँचे को कैसे पुनर्गठित किया जाय। अनेक बार विषय पर अनावश्यक विवाद खड़े हो जाते हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में शिक्षा को 10+2+3 के आधार गठित किया गया है। शिक्षा के समवर्ती सूची में होने से भी विवाद उत्पन्न होते हैं। प्रसंगवश दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा चार वर्षीय स्नातक पाठयक्रम स्वायत्तता के नाम लागू करना क्या उचित है? शिक्षा नीति का पालन कराने के लिये नियामकीय संस्था का हस्तक्षेप कैसे स्वायत्तता व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अतिक्रमण कहा जा सकता है? ऐसे प्रश्नों पर राष्ट्रीय सहमति की पुन: पुष्टि की आवश्यकता है। देश में पाठ्यचर्या निर्धारण में एक विशिष्ट विचारधारा का प्रभुत्व रहा है। सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में विशेष कर इतिहास के संबंध में भारी विवाद रहे हैं। संदर्भित विचारधारा ने कभी भी राष्ट्रीय गौरव के प्रतीक प्राचीन ज्ञान, विचार, जीवन पद्धति, राष्ट्रीयता, सांस्कृतिक विशिष्टताओं को पाठ्यचर्या का भाग नहीं बनने दिया वरन इनके बारे में भ्रामक व विषयनिष्ठ सामग्री को पाठ्यचर्या का अंग बनाकर राष्ट्रीय हितों को हानि पहुँचायी है। यह विवाद अब वैचारिक लड़ाई का रूप ले चुका है। आवश्यकता है नये शिक्षा आयोग द्वारा इस पर विचार किया जाये। शिक्षा को भारतीय संस्कृति, प्राचीन उपलब्ध अथाह ज्ञान भंडार के आज के संदर्भ में उपयोग व राष्ट्रीयता के विचार को पुष्ट करने वाली शिक्षा व्यवस्था को अपनाया जाये।

शिक्षा में गहनता लाने में भाषा का भारी योग होता है। मातृ भाषा ही शिक्षा का सशक्त माध्यम हो सकती है। अंग्रेजी को रोजगार व ज्ञान प्राप्ति का साधन मानने वालों संख्या में लगातार वृद्धि से सभी को समान अवसर नहीं मिल पा रहे हैं। प्रधानमंत्री ने शपथ ग्रहण करने के साथ ही हिन्दी में संवाद करने से सकारात्मक संदेश गया है। आवश्यकता है कि शिक्षा में भारतीय भाषाओं के प्रयोग और पुष्ट किया जाये। गरीबी व बेरोजगारी विकास के मार्ग की बड़ी बाधायें हैं। इनके लिये देश में ऐसी शिक्षा प्रणाली अपनानी होगी जो 'रोजगार चाहने वालों' के स्थान पर 'रोजगार प्रदान करने वालों' को प्रेरित कर सके। प्रधानमंत्री का स्पीड, स्केल व स्किल पर बल देना इसी मंतव्य को व्यक्त करता है। बेरोजगारी व गरीबी को दूर करने का एक मात्र उपाय कौशल विकास वृहत स्तर पर गति के साथ उत्पादन करना मात्र है। इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये सभी को शिक्षा के समान अवसर मिलने चाहिये जो आज संभव नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर निजी उद्यम का कोई स्थान न हो। एक निश्चित् दायरे में रहने वाले सभी बच्चों को एक समान स्तर की शिक्षा देने के लिये नेबरहुड स्कूल की व्यवस्था को सरकार की देखरेख में लागू किया जाय। माध्यमिक व उच्च शिक्षा में कड़े नियामकीय तंत्र की देखरेख में सरकारी व निजी उद्यम सहयोग कर सकते हैं। शिक्षा स्वायत्त हो, नवाचारों व नये प्रयोगों को करने की छूट हो तथा संपूर्ण देश में एक समान शिक्षा व्यवस्था हो जिसकी व्यवस्था नियामक तंत्र द्वारा सुनिश्चित की जानी चाहिये।

भारतीय संस्कृति व संस्कारों में 'गुरु' को सर्वोच्च स्थान व सम्मान दिया गया है। गुरु के बिना ज्ञान संभव नहीं है। गुरु गोविन्द में से गुरु को चुनने की सीख भारतीय संस्कृति देती है। गुरु पूर्णिमा के अवसर पर महर्षि व्यास की परंपरा को आगे बढ़ाना सभी शिक्षकों का दायित्व है। शिक्षक ही आज गुरु के रूप में स्थापित है। ऐसे में शिक्षा की चुनौतियों से निपटने में शिक्षकों की भूमिका और भी व्यापक हो जाती है। गुरु-शिष्य परंपरा का पालन करते हुये शिष्यों को संस्कारयुक्त ज्ञान से परिचित कराने की भूमिका शिक्षक को ही निभानी है। गुणवत्तायुक्त शिक्षा प्रदान करने के अभीष्ट को सिद्ध करने में शिक्षकों को कार्य संस्कृति को बढ़ावा देना होगा। तब ही आज का आशावादयुक्त वातावरण देश को एक दिशा दे सकेगा व देश नई ऊँचाईयों को छू सकेगा। ❑

शिक्षक बनें गुरु

❑ विष्णु प्रसाद चतुर्वेदी

मैकालयी शिक्षा प्रारम्भ होने से गुरु और शिक्षक दो अलग संस्थाएं हो गई है। प्राचीनकाल में गुरु ही शिक्षक होता था। गुरुकुल में शिक्षा के दो भाग थे विद्या व अविद्या। विद्या के अन्तर्गत मूल्यों व संस्कारों का अभ्यास कराया जाता था। अविद्या के अन्तर्गत जीविकोपार्जन के साधन सिखाये जाते थे। आज मात्र अविद्या को बोलबाला है। शिक्षक प्रतियोगी परीक्षा उत्तीर्ण कराने के सहायक बन कर रह गए है। यही कारण है कि समाज में धन की तो वर्षा हो रही है मगर सुख चैन छिनता जा रहा है। प्राचीन काल की शिक्षा में विद्या व अविद्या की भागीदारी बराबर की थी। आज विद्या शून्य हो रही है तो अविद्या 100 प्रतिशत से आगे निकलने के प्रयास में है। शिक्षक, इंजिनियर, डॉक्टर, प्रशासक व प्रबन्धक उत्पन्न करने में लगे है। अच्छे नागरिक बनाना किसी की प्राथमिकता नहीं रही है। अच्छे नागरिकों से ही अच्छा समाज बन सकता है।

भारत की सनातन परम्पराओं में एक परम्परा गुरु पूर्णिमा मनाने की भी है। आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा को गुरु पूर्णिमा कहते हैं। यह दिन महाभारत के रचयिता कृष्ण द्वैपायन व्यास का जन्मदिन भी है। कृष्ण द्वैपायन संस्कृत के प्रकांड विद्वान थे और उन्होंने चारों वेदों की रचना की थी। इस कारण कृष्ण द्वैपायन का एक नाम वेद व्यास भी है। वेद व्यास जी को आदिगुरु कहा जाता है और उनके सम्मान में गुरु पूर्णिमा को व्यास पूर्णिमा नाम से भी जाना जाता है। कहते हैं कि वेदव्यास जी ने पंचम वेद 'महाभारत' की रचना गुरुपूर्णिमा के दिन पूर्ण की और विश्व के सुप्रसिद्ध आर्ष ग्रंथ ब्रह्मसूत्र का लेखन गुरु पूर्णिमा के दिन ही आरंभ किया था। उस दिन देवताओं ने वेदव्यास जी का पूजन किया। तभी से व्यास पूर्णिमा मनायी जा रही है।

गुरु पूर्णिमा वर्षा ऋतु के आरंभ में आती है। इस दिन से चार महीने तक परिव्राजक साधु-संत एक ही स्थान पर रहकर ज्ञान की गंगा बहाते हैं। ये चार महीने मौसम की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ होते हैं। न अधिक गर्मी और न अधिक सर्दी। इसलिए अध्ययन के लिए उपयुक्त माने गए हैं। जैसे सूर्य के ताप से तप्त भूमि को वर्षा से शीतलता एवं फसल पैदा करने की शक्ति मिलती है, ऐसे ही गुरु चरण में उपस्थित साधकों को ज्ञान, शांति, भक्ति और योग साधना करने की शक्ति मिलती है।

गुरु पूर्णिमा के दिन गुरु पूजा का विधान है। शास्त्रों में गु का अर्थ बताया गया है- अंधकार या मूल अज्ञान और रु का का अर्थ किया गया है- उसका निरोधक। गुरु को गुरु इसलिए कहा जाता है कि वह अज्ञान तिमिर का ज्ञानांजन-शलाका से निवारण कर देता है। अर्थात अंधकार को हटाकर प्रकाश की ओर ले जाने वाले को गुरु कहा जाता है।

भारत भर में गुरु पूर्णिमा का पर्व बड़ी श्रद्धा व धूमधाम से मनाया जाता है। प्राचीन काल में जब विद्यार्थी गुरु के आश्रम में नि:शुल्क शिक्षा ग्रहण करता था तो इसी दिन श्रद्धा भाव से प्रेरित होकर अपने गुरु का पूजन करके उन्हें अपनी शक्ति सामर्थ्यानुसार दक्षिणा देकर कृतकृत्य होता था। आज भी इसका महत्व कम नहीं हुआ है। पारंपरिक

रूप से शिक्षा देने वाले विद्यालयों में, संगीत और कला के विद्यार्थियों में आज भी यह दिन गुरु को सम्मानित करने का होता है। मंदिरों में पूजा होती है, पवित्र नदियों में स्नान होते हैं, जगह जगह भंडारे होते हैं और मेले लगते हैं।

शिक्षक गुरु

मैकालयी शिक्षा प्रारम्भ होने से गुरु और शिक्षक दो अलग संस्थाएं हो गई है। प्राचीनकाल में गुरु ही शिक्षक होता था। गुरुकुल में शिक्षा के दो भाग थे विद्या व अविद्या। विद्या के अन्तर्गत मूल्यों व संस्कारों का अभ्यास कराया जाता था। अविद्या के अन्तर्गत जीविकोपार्जन के साधन सिखाये जाते थे। आज मात्र अविद्या को बोलबाला है। शिक्षक प्रतियोगी परीक्षा उत्तीर्ण कराने के सहायक बन कर रह गए है। यही कारण है कि समाज में धन की तो वर्षा हो रही है मगर सुख चैन छिनता जा रहा है। प्राचीन काल की शिक्षा में विद्या व अविद्या की भागीदारी बराबर की थी। आज विद्या शून्य हो रही है तो अविद्या 100 प्रतिशत से आगे निकलने के प्रयास में है। शिक्षक, इंजिनियर, डॉक्टर, प्रशासक व प्रबन्धक उत्पन्न करने में लगे है। अच्छे नागरिक बनाना किसी की प्राथमिकता नहीं रही है। अच्छे नागरिकों से ही अच्छा समाज बन सकता है।

यह सही है कि भूत को वैसा ही पुनः नहीं लौटाया जा सकता मगर शिक्षक को मात्र विषय रटाने वाले रिंग मास्टर की भूमिका को त्याग कर विद्यार्थी कि क्षमता के अनुसार समग्र विकास की ओर घ्यान देने वाला बनना होगा। विषय के साथ मूल्य व संस्कार भी सिखाने होगें तभी समाज सही चल सकेगा।

प्राचीन भारत में अनेक अच्छे गुरुओं के उदाहरण मिलते हैं मगर आधुनिक भारत में भी हमारा मार्गदर्शन करने अनेक उदाहरण है। स्वामी विवेकानंद का कहना है कि मनुष्य की अन्तर्निहित पूर्णता को अभिव्यक्त करना ही शिक्षा है। जिस प्रकार विशाल वटवृक्ष के सभी गुण उसके सूक्ष्म बीज में समाए होते हैं उसी प्रकार मनुष्य के

सभी गुण भी उसके प्रारम्भिक प्रथम कोशिका में निहित होते हैं। शिक्षा का कार्य तो उन गुणों को विकसित करना मात्र है। स्वामी जी बच्चे की स्वाधीनता को उसके विकास की पहली शर्त बताते हैं। शिक्षक चाहिए कि वह बच्चे का उद्धार करने का भाव मन में लाने की बजाय उसे ईश्वर की सन्तान मान कर उसकी सेवा करे।

शिक्षा में राष्ट्र वाद की नींव सतीशचन्द्र मुखर्जी ने 1902 में डॉन् सोसाइटी की स्थापना के रूप में रखी। डॉन् सोसाइटी के सक्रिय सदस्यों में बहिन निवेदिता, जतिन मुखर्जी, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, जो बाद भारत के प्रथम राष्ट्रपति बने, राधाकुमुद मुखर्जी, किशोरीमोहन गुप्ता आदि थे। डॉन् सोसाइटी प्रमुख उद्देश्य भारतीय विश्वविद्यालय आयोग की रिपोर्ट का विरोध करने हेतु युवकों को तैयार करना था। सोसाइटी चाहती थी कि बंगाल के लोगों को मात्र क्लर्क बनाने वाली शिक्षा नहीं दी जावे। सोसाइटी एक आदर्श शिक्षा व्यवस्था चाहती थी जिसमें धर्म, नैतिकता के साथ रोजगार मूलक कुछ व्यवहारिक ज्ञान दिया जाता हो। ऐसी शिक्षा जो विद्यार्थी के चरित्र का निर्माण कर सके। शिक्षा पूर्ण करने के बाद युवक अपने स्वयं के उद्योग चला सके। ऐसी शिक्षा जो भारतीय समाज की आवश्यकताओं को पूरा करती हो। देश की संस्कृति का संरक्षण करने वाली हो।

महर्षि अरविन्द ने शिक्षा के विकास हेतु बहुत कार्य किया। अरविन्द स्वयं पाश्चात्य शिक्षा पद्धति से शिक्षित हुए मगर वे उस शिक्षा पद्धति को सही नहीं मानते थे। उनका शैक्षिक सोच प्राचीन भारतीय परम्परानुसार ही है। कलकत्ता आने के बाद वे राष्ट्रीय शिक्षा परिषद के सदस्य बने तथा सुबोधदत्त मलिक के साथ मिल कर युवकों को शिक्षित करने हेतु राष्ट्रीय महाविद्यालय की स्थापना की। यही कॉलेज आगे चलकर जादवपुर विश्वविद्यालय में विकसित हुआ।

प्राध्यापक के रूप में गुरुजी माधवराव का जीवन यह सन्देश देता है कि विद्यार्थी ही शिक्षक का प्रथम आराध्य होता है। माधवराव महाविद्यालय में शिक्षण करते समय तो विद्यार्थी हितों का ध्यान रखते ही थे मगर इसके बाद के समय मे भी पढ़ने में बहुत से विद्यार्थियों की मदद किया करते थे। इसके लिए उन्हें अपने विषय के अतिरिक्त अन्य विषयों का अध्ययन करना पड़ता था। माधवराव की इस मदद से प्रभावित विद्यार्थियों ने ही सम्मानवश उन्हें 'गुरुजी' का सम्बोधन देना प्रारम्भ किया था। 'गुरुजी' सम्बोधन का स्नेहसूत्र इतना मजबूत सिद्ध हुआ कि वह सदा सदा के लिए उनसे जुड़ा रहा।

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर का मानना था शिक्षक का लेखकीय योगदान उसके

शिक्षण कार्य से अधिक महत्वपूर्ण होता है। शिक्षक एक दो पीढ़ियों के बीच कार्य कर सकता है जबकि उसका लेखन कई पीढियों तक मार्गदर्शन करता रहता है। ईश्वरचन्द विद्यासागर ने वर्ण परिचय पोथी लिखकर बंगाल की अनेक पीढियों को अक्षर ज्ञान प्राप्त करने में मदद की। ईश्वरचन्द विद्यासागर ने प्राथमिक स्कूल के बच्चों के लिए लिखने के साथ ही प्रचुर मात्रा में वयस्क साहित्य भी रचा हैं। आज के अपने को बड़ा समझने वाले शिक्षक इससे प्रेरणा ले सकते हैं।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के जीवन को गौर से देखने पर यह स्पष्ट नजर आता है कि उन्होंने वकालत को अर्थ प्राप्ती के लिए ही अपनाया था जबकि वे शिक्षकत्व से जीवनभर जुड़े रहे थे। ए.एम. करने बाद उन्होंने आजीविका के लिए शिक्षक व्यवसाय को ही अपनाया था। कानून की पढ़ाई के साथ ही उन्होंने शिक्षक बन पढ़ाना स्वीकार किया। शिक्षा में अभिरुचि होने के कारण ही पटना विश्वविद्यालय में सीनेट व सिंडिकेट के महत्वपूर्ण पदों का दायित्व निभाना स्वीकार किया।

छूआछूत के अपमान सहते हुए भी शिक्षक के रूप में डॉ.भीमराव अपने विद्यार्थियों में बहुत लोकप्रिय रहे। विस्तृत अध्ययन की प्रवृत्ति, संभाषण कला में प्रवीणता तथा शिक्षा की शक्ति में गहन आस्था के कारण डॉ.भीवराव एक स्वाभाविक शिक्षक थे।

स्वामी रामतीर्थ का औपचारिक शिक्षक जीवन बहुत ही छोटा रहा मगर संन्यासी के रूप में शिक्षा पर उनका बहुत जोर रहा। महिला व गरीब बच्चों की शिक्षा पर वे बहुत जोर दिया करते थे। स्वामी जी अपने भक्तों को समझाते कि पिछड़े वर्ग की शिक्षा की उपेक्षा करना उन जड़ों को काटना है जिनसे विशालवृक्ष रूपी इस विश्व को पोषण मिलता है। स्वामी रामतीर्थ का प्रयास रहा कि शिक्षित नवयुवकों का ऐसा दल तैयार हो जो मिशनरी भाव से कार्य कर सके। स्वामी रामतीर्थ ने अमेरिका में अध्ययन कर रहे युवकों को संगठित करने हेतु एक संस्था भी गठित की। इस संस्था के माध्यम से युवकों को छात्रवृति के रूप में सहयोग किया जाता ताकि वे अमेरिका में उच्च शिक्षा प्राप्त कर देश के अन्य लोगों को शिक्षित कर सके।

देश में शिक्षा का विकास कैसे हो इसकी एक स्पष्ट योजना आशुतोष मुखर्जी ने अपने मस्तिष्क में बना रखी थी। अपने प्रयासों से कलकत्ता विश्वविद्यालय में स्नातक, अधिस्नातक व अनुसंधान स्तर पर भारतीय आवश्यकताओं के अनुरूप कई नए विषय आशुतोष मुखर्जी ने प्रारम्भ करवाएं। ऐसी व्यवस्था की कि देश के सभी भागों से प्रतिभाओं को बिना भेद भाव के अध्ययन का अवसर कलकत्ता विश्वविद्यालय में उपलब्ध होने लगा था। देश-विदेश के प्रतिभावान शिक्षकों को कोलकात्ता विश्वविद्यालय में पढ़ाने हेतु प्रेरित करने का कार्य भी आशुतोष मुखर्जी ने किया।

पूर्व राष्ट्रपति अब्दुल कलाम के जीवन का एक अत्यन्त महत्पूर्ण पक्ष उनका बच्चों की क्षमताओं में अटूट विश्वास करना है। बड़े वैज्ञानिक तथा राष्ट्रपति जैसे महत्वपूर्ण पद पर रहते हुए देश के विभिन्न भागों में जाकर बच्चों से बातें करना उनके प्रश्नों के उत्तर देना, उनके मन में देश के प्रति प्रेम व निष्ठा उत्पन्न करना, देश व काल की वास्तविकताओं से अवगत कराना, बच्चों की आँखों में, मजबूत व विकसित भारत के, सपने पिरोने से हम प्रेरणा ले सकते है। भारत सरकार के वैज्ञानिक सलाहकार के पद से मुक्ति मांग कर अन्ना विश्वविद्यालय में पढ़ाना प्रारम्भ करना उनकी मजबूरी नहीं शिक्षक पद के गौरव की अनुभूती करना था। राष्ट्रपति पद से मुक्त होने के बाद पूर्व राष्ट्रपति की बजाय कार्यरत प्रोफेसर कहलाने की अब्दुल कलाम की इच्छा हमें भी अपने शिक्षकत्व के महत्व का भान करा कर गुरु बनने को प्रेरित कर सकती है। ❑

(बाल एवं विज्ञान विषयक लेखक)

हर प्रसाद दास जैन कॉलेज, आरा (बिहार)

दूरभाष : 06182-23249 (का.), 0612-347883 (आ.)

मानविकी, विज्ञान एवं वाणिज्य की
उच्च शिक्षा का प्रतिष्ठित संस्थान

नए दौर में शिक्षक की बदलती भूमिका

चिन्ता की बात तो यह है कि शिक्षक समाज ईमानदारी से बदलती परिस्थितियों के साथ पूरी तौर पर न बदलने को तैयार है और न ही अपने 'स्व' की रक्षा के लिए दृढ़ है। आज की भौतिकवादी युग में वह भी आम आदमी की भांति वे सभी सुविधाएं हासिल करना चाहता है और गुरु भी बने रहना चाहता है। जो कठिन है। आज का शिक्षक त्याग, तपस्या और आदर्श के भ्रम से अलग रहकर आम आदमी की तरह जीना और सुख-सुविधाएं हासिल करने ही रूचि रख रहा है। उसको भी लगता है कि आज के समाज में वही सम्मानित और आदर्शवादी है जिसके पास सभी भौतिक सुविधाएं उपलब्ध है। इस चिन्ता के रहते शायद ही शिक्षक समाज अपनी खोई प्रतिष्ठा और सम्मान हासिल कर पाये। शिक्षक की आज वहां पहुंच चुका है, जहां से लौट पाना काफी कठिन है। फिर उससे किसी बड़े आदर्श का लक्ष्य पाने की उम्मीद करना बेमानी होगी।

❑ **बजरंगी सिंह**

आज के इस वैश्विक युग में व्यक्ति की अवधारणाएं, मान्यताएं और आस्था व्यक्तिगत सुविधा के अनुसार बन-बिगड़ रही है। ऐसे में शिक्षक को अपनी 'गुरु' वाली भूमिका का निर्वाह कर पाना एक बड़ी चुनौती बन गई है। आज हम शिक्षक को ब्रह्मा, विष्णु तथा गुरुओं का गुरु महेश्वर के रूप में स्वीकार करने को तैयार नहीं हैं। शिक्षक भी इन सम्बोधनों को अपने लिए व्यर्थ मानने लगा है। उसे लगता है कि ऐसे सम्बोधन शिक्षक को मनुष्य बने रहने से अलग करते हैं जो उसे सामान्य बने रहने में बाधक है और अतिरिक्त चेतनाशील होने के लिए मजबूर करते हैं। ऐसे में जरुरी हो जाता है कि शिक्षक अपनी भूमिका खुद तय करें।

आज के इस कम्प्यूटर युग में जहां ज्ञान के स्रोत बढ़े हैं, वहीं सूचनाओं को पाने में आसानी और सहजता आई है। ज्ञान का स्रोत गुरु मीडिया, गुगल और इंटरनेट हो गया है, तो शिक्षक के लिए एक बड़ी चुनौती आज इस बात को लेकर पैदा हो गई है कि अपनी पहचान और मर्यादा को कैसे समाज में अक्षुण्य रखे। उसके लिए जरूरी है कि वह अपने को बदलते समय एवं मान्यताओं के अनुकूल तैयार करें। यही नहीं उसे अपने ज्ञान को भी अपडेट करना होगा। सिर्फ किताबी ज्ञान और परम्परागत रीतियों एवं मान्यताओं के सहारे शिक्षकत्व और गुरु की गरिमा तथा पहचान को कायम रख पाना काफी कठिन ही नही असम्भव भी होता जा रहा है। इसलिए गुरु की पहचान को वापस लाने के लिए तद्नुकूल बनना पड़ेगा। यह सच है कि एक युग था जब गुरु ही ज्ञान का केन्द्र होता था। आज के इस डिजिटल युग में जहां एक क्लिक पर कम्प्यूटर की स्क्रीन पर ज्ञान की गंगा बहने लगती है और दो मिनट में हम देश-विदेश की सूचनाओं और जानकारियों से परीचित हो जाने में सक्षम हो चुके हैं। वहां एक व्यक्ति (शिक्षक) जो अभी तक अपने को बदलने को तैयार नहीं है, वह भला इस तेजी से बदलती दुनिया में अपने गुरु की महिमा एवं मान्यता को भला कैसे अक्षुण्य रख पायेगा। वास्तव में यह शिक्षक समाज के लिए आज एक यक्ष प्रश्न बन चुका है।

आज के बदलते इस युग एवं समय में एक देश एवं राष्ट्र की दूरियां काफी कम हुई हैं। किन्तु व्यक्ति के बीच की दूरियां काफी बढ़ी हैं। यह भी सच है कि ज्ञान और विज्ञान के क्षेत्र में हम बराबर आगे बढ़ रहे हैं, किन्तु हमारी मनुष्यता कलंकित हुई है। प्रगति और तरक्की के नाम पर एक दूसरे को पीछे ढकेलने में कोई संकोच नहीं है। बल्कि इसे आज हम अपनी योग्यता समझने लगे हैं। आज हर व्यक्ति तरक्की के नाम पर मनुष्यता भूल चुका है। पशु की भांति खुद अकेले ही पूरे क्षेत्र में चरना चाह रहा है। यदि किसी ने उसके इस त्यौहार में अड़चन पैदा करने की कोशिश की तो बिगड़ैल जानवर की तरह वह उसे उस क्षेत्र से हटाने के लिए वे सारे उपाये और उपक्रम करने को उद्धत हो उठता है। जो एक मानवीय प्रवृत्ति एवं स्वभाव के विपरीत है। ऐसे शिक्षक की भूमिका और भी आज चुनौतीपूर्ण हो गई है।

सच तो यह है कि वैदिक काल में जिस शिक्षक के गुरु की पदवी हासिल थी। बदलते युग और विकास एवं तरक्की के अंधी दौड़ में वही शिक्षक आज कटघरे में खड़ा है। असली गुरु बदलती परिस्थितियों की वजह से धीरे-धीरे विलुप्त हो रहा है। यह स्थिति केवल शिक्षक के लिए ही खतरनाक नहीं है, बल्कि इससे पूरा समाज प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष प्रभावित हो रहा है। ऐसे में शिक्षक की भूमिका और भी बढ़ जाती है। चिन्ता की बात तो यह है कि शिक्षक समाज ईमानदारी से बदलती परिस्थितियों के साथ पूरी तौर पर न बदलने को तैयार है और न ही अपने 'स्व' की रक्षा के लिए दृढ़ है। आज की भौतिकवादी युग में वह भी आम आदमी की भांति वे सभी सुविधाएं हासिल करना चाहता है और गुरु भी बने रहना चाहता है। जो कठिन है। आज का शिक्षक त्याग, तपस्या और आदर्श के भ्रम से अलग रहकर आम आदमी की तरह जीना और सुख-सुविधाएं हासिल करने में ही रुचि रख रहा है। उसको भी लगता है कि आज के समाज में वही सम्मानित और आदर्शवादी है जिसके पास सभी भौतिक सुविधाएं

उपलब्ध है। इस चिन्ता के रहते शायद ही शिक्षक समाज अपनी खोई प्रतिष्ठा और सम्मान हासिल कर पाये। शिक्षक की आज वहां पहुंच चुका है, जहां से लौट पाना काफी कठिन है। फिर उससे किसी बड़े आदर्श का लक्ष्य पाने की उम्मीद करना बेमानी होगी।

हम आज ऐसे युग में हैं, जब भविष्य हमारे सामने आकर खड़ा है और हम इस बात से अनभिज्ञ है कि भूतकाल समाप्त हो चुका है। अत: हमको वर्तमान की चुनौतियों और परिवर्तनों का सामना करने के लिए स्वयं को तैयार करना होगा। ऐसी स्थिति में हमें उस मार्ग को अपनाना चाहिए जो हमें प्रतियोगिता की ओर नहीं सामंजस्य की ओर ले जाता हो, भोगवाद की ओर नहीं, संयम की ओर ले जाता हो, इसके लिए शिक्षक को ऐसी परिस्थितियों का निर्माण करना होगा जो सौहार्द का सृजन कर सके। अब सवाल यह उठता है कि जब समाज में व्यक्तिगत आकांक्षाओं, आवश्यकताओं तथा अहं को पूरा करने की होड़ लगी है।

तो भला शिक्षक बदली इन परिस्थितियों में क्या कर पायेगा? इस सवाल का जवाब अन्ततोगत्वा शिक्षक समाज को ही ढूंढ़ना है।

इस भौतिकवादी युग में शिक्षक की श्रेष्ठता तथा विश्वसनीयता दोनो संकट में हैं। इससे भी बड़ी चुनौती 'गुरु' गरिमा को सुरक्षित रखने की है। शिक्षक जिन गुणों के लिए पूज्य रहा, वह आज खतरे में है। तर्क के लिए हम कह सकते हैं, जब सम्पूर्ण समाज धन, पद, प्रतिष्ठा और सुविधाओं को पाने की होड़ में शामिल है, तो शिक्षक ही उससे कैसे बचा रह सकता है। तर्कों के सहारे शिक्षक अपनी जिम्मेदारियों से नहीं भाग सकता है। क्योंकि हमने राष्ट्र निर्माण की जिम्मेदारी स्वेच्छा से स्वीकार किया है। इसलिए पीढ़ी में बदलाव तथा अच्छे संस्कार पैदा करने के लिए शिक्षक को ही आगे आना होगा। सही शिक्षक किसी घटना या व्यवस्था से समझौता नहीं करता है। ऐसे में यदि हमने शिक्षक बनना स्वीकार किया है तो हमें उसके योग्य अपने को बनाना ही होगा।

हमें आज ऐसे शिक्षक की जरूरत है जो ज्ञान और सूचना के मध्य उत्पन्न अंतर को समझ ही न सकें बल्कि उसे खत्म करने के लिए आगे भी आएं। हकीकत है कि आज सूचनाओं की अधिकता हो गई है। ज्ञान को कोई पूछने वाला नहीं है। आज शिक्षक भी रटने की बात करता है, सीखने की नहीं। यदि शिक्षक इस सोच को नहीं बदलता है, तो वह विद्यार्थी के अन्दर छिपे ज्ञान को आगे नहीं बढ़ा पायेगा। शिक्षक को किताबी ज्ञान के साथ व्यवहारिक ज्ञान देने के लिए खुद को तैयार करना होगा। हमारे बीच तमाम पीएचडी तथा डी लिट जैसी विशिष्ट योग्यताधारी शिक्षक मौजूद हैं किन्तु वह छात्र के मनोभाव को पढने में सक्षम साबित नहीं हो पा रहे हैं। कम ही ऐसे शिक्षक है जो विशिष्ट गुण छात्रों में पैदा कर सकने में सक्षम हैं। यदि हम इस सच्चाई को स्वीकार नहीं करते हैं तो तय है कि स्कूलों में बच्चे पढने जाना बन्द कर देंगे। यहां डा. राधाकृष्णन के उस वक्तव्य का उल्लेख करना जरूरी है, जब वह भारत के संविधान सभा में बोल रहे थे। उन्होंने कहा जब सत्ता और अधिकार व्यक्तियों की योग्यता से बड़े हो जायेंगे तब बुरा वक्त शुरू होगा। शायद वह समय आज आ चुका है। उसी का प्रतिफल यह है कि देश की शिक्षा के साथ शिक्षक का दुर्बल मनोबल, सेवा सुरक्षा की कमी, पर्याप्त वेतन का अभाव तथा कमजोर समर्थन व्यवस्था ही उसे अधोगति की ओर ढकेलती जा रही है। हमारे देश की जितनी भौगोलिक विशालता और विविधता है, इतिहास और संस्कृति में उतनी ही प्राचीनता। दुर्भाग्य है कि हम आज उससे धीरे-धीरे यह कहकर किनारा करते जा रहे हैं कि अतीत के सहारे भावी चुनौतियों का सामना नहीं किया जा सकता है। भारत की शिक्षा भोगवादी कभी नहीं रही है। आज जब भारत की प्राचीन शिक्षा और उसकी महान गुरु परम्परा की बात करते हैं तो हमारे देश का कथित प्रगतिशील समाज उसकी आलोचना शुरू कर देता है। उसकी बस यही कोशिश होती है कि भारत की प्राचीन उपलब्धियों, मान्यताओं तथा सफलताओं को कैसे नकारा जाय ? आजादी के बाद शिक्षा का जो स्वरूप एवं नीति हमने विकसित की वह पूरी तौर पर उपयोगतावादी रही। उसके मूल चरित्र के कारण ही बाजारवाद को अहमियत मिली। आगे चलकर शिक्षा का बाजारीकरण हो गया। उसके साथ-साथ बाजार की वे तमाम खामियां एवं बुराईयां भी हमारी शिक्षा में धीरे-धीरे कर घर कर गई। परिणाम यह रहा कि भारत की समृद्ध गुरु-शिष्य परम्परा की अकाल मौत हो गई। गुरु शिक्षा बेचने वाला व्यापारी तो शिष्य उसका खरीददार बन गया। इसमें बदलाव करना होगा। तभी शिक्षक का प्रचीन गौरव व सम्मान लौट सकता है। ❑

(महामंत्री, अखिल भारतीय माध्यमिक शिक्षक महासंघ)

Towards making of a 'Guru'

❑ TS Girishkumar

Philosophy makes a distinction between 'knowledge' and 'wisdom' but European philosophy that begins from Greek tradition do not go into the details of the differences in them. Bharatiya tradition also makes a clear distinction between wisdom and knowledge but discusses in detail about their differences and the differences in the methodologies in acquiring them. In Bharatiya tradition, wisdom is known as 'jnana' and knowledge is 'vijnana'. Personally I would further make a distinction in knowledge, as 'mere information' and 'vivid knowledge' for a better clarity.

For Bharatiya tradition, the concept, role and importance of 'Guru' had always been of much importance. The difference (if any) between what a Guru is, and what an Acharya is subtle and a thin one; and for most practical parts Acharya and Guru are often used as synonyms. The extent of respect towards Acharya becomes evident from the expression, 'Mathru, Pitru, Acharya and AtithiDevoBhava'. Some of the Acharyas are also great Rishis, but some of great Acharyas like Sankara, Madhava, Nimbarka etc. are not known to be Rishis, though much later Ramana and Aurabindo became known as Rishis and not as Acharyas. I am really not able to go into the details of this apparent 'complication', and as for the present, I am to confine to the questions of how to make an Acharya or Guru out of a teacher, or Shikshak as he is popularly known.

Given the fact that the fundamental 'business' of a teacher is with knowledge and imparting knowledge, one must start from what knowledge is, and what is it all about the imparting of it. Then let us make a distinction between knowledge and wisdom, and the methodology involved in both. And further, let us discuss how to make an Acharya out of a teacher.

Perhaps the first ever text in the history of mankind that discusses what knowledge is in details shall be the 'Nyaya Sutra' written by Maharishi Akshapada Gautama, most likely in 3rd century BC. The impact and importance of this text becomes evident from the fact that this single text had nearly forty interpretations, or 'Bhashayas' during the course of time, by scholars who are known to us. There is just one thing I would like to highlight, from all the discussions of Epistemology from Nyaya Sutra, and it is this simple point: "knowledge worth the name must have the property of affecting the knower". This one point at once clears a lot of confusions and doubts about education and knowing, as we go on understanding it.

It is in our experience that there are many 'qualified' or 'educated' people around us, but they still remain not refined or civilised. At times this also becomes an appalling situation as well, to other educated people. 'Knowledge must affect the knower' is the point to be discussed here: and it is this 'affectivity' of knowing that we ought to know. The knowledge known, or received, must affect the knower in such a manner that it must refine him through a process of purification and create a refined person, a person who is a 'sanskrita' or a sanskari. As Sanskara is culture, and culture is refined human existence, knowledge that affecting the knower shall make him cultured, and in modern terms, civilised. If the knowledge does not affect the knower, then any amount of knowledge shall not make any difference to the person concerned: he shall continue to remain impure, and for him, any amount of knowing is not going to be anything more than information.

Philosophy makes a distinction between 'knowledge' and 'wisdom' but European philosophy that begins from Greek tradition do not go into the details of the differences in them. Bharatiya tradition also makes a clear distinction between wisdom and knowledge but discusses in detail about their differences and the differences in the methodologies in acquiring them. In Bharatiya tradition, wisdom is known as 'jnana' and knowledge is 'vijnana'. Personally I would further make a distinction in knowledge, as 'mere information' and 'vivid knowledge' for a better clarity.

Knowing is through 'cognition', that is sense - object contact. European Philosophical tradition, in their epistemological enterprise do not go beyond this cognitivity, though at some point Philosophers like Kant speaks about 'pure reason' 'apriori' reasoning, and Bergson speaks about 'intuition' and the like. But beyond merely mentioning

something of an abstract towards going beyond sense organs in knowing, they do not have categories to go into enquiring further. (much later, we find physicists from the 'new physics' fold studying the Vedas and Upanishads to get a feel of the methods used therein to go about exploring beyond in their world of science, beyond cognitivity, precisely for this very reason)

In Bharatiya knowledge tradition, the distinction between jnana (wisdom) and vijnana (knowledge) is well spelt out, and the methodologies are also equally spread out. What one gets from sense - object - contact - experience is simply information that can turn into knowledge, but shall never be wisdom. The method to acquire wisdom in a direct one, it is trans-sensory; and this is called 'experiential' knowledge. One must not confuse the concept of 'experience' in Bharatiya knowledge tradition with the concept of experience of an empiricist; the empiricist means only sense object contact from his expression of experience. Bharatiya knowledge tradition has many supporting texts to these, which shall give full explanations about what is 'experiential'; and one such text is Maharishi Patanjali's Yoga. Patanjali gives full explanation about how one can acquire the skill of knowing directly, and without involving in any physical means. (perhaps this explains so many mysteries, like Arya Bhatta calculating the speed of light and planetary positions, Kanada giving atomic theories and many more mysteries of these sort)

So we have two levels here, knowledge that is acquired through cognition and wisdom that is acquired through experience. As a matter of fact, it is rather impossible to create a Guru who can impart wisdom to the students, but it is certainly possible for us to think in

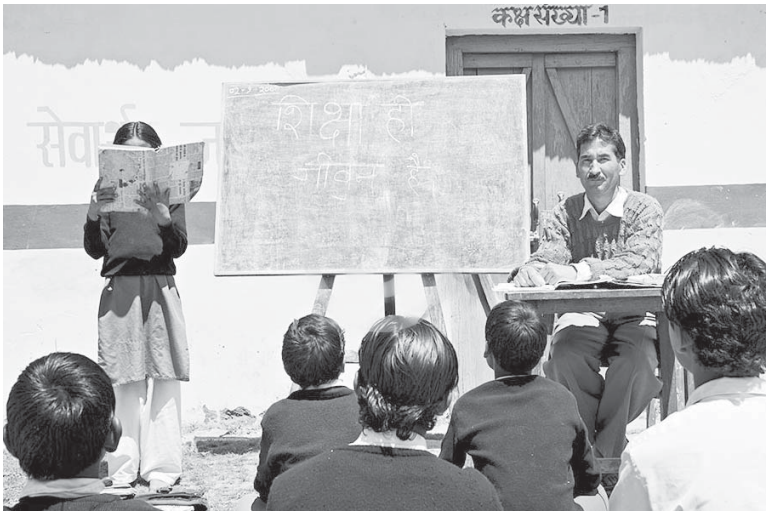

terms of creating a band of teachers who can be Gurus, to make knowledge affecting the knower. It is here that a teacher must need vocation, conviction and strength. Strength because such a teacher shall have to undergo all kinds of miseries in this materialistically oriented world, there may not be many to support him, and in most times he has to work alone.

We have teachers, but we want them to be Gurus or Acharyas. To this end, one has to be thorough with his own, that is the Vedopanishadic knowledge tradition, and the importance therein. He must know what he is, what his ancestors were, and how this knowledge tradition survived through many adverse situations just because of the greatness of our forefathers. In one word, a teacher must fundamentally be a 'Swabhimani' Bharatiya; and here I am not under estimating the task of becoming and being a Bharatiya. But a teacher has to be a Swabhimani Bharatiya, and he must be conscious that he is working simply as a part of a long chain of tradition, and working towards a better society of this great nation. A teacher must feel, that he has to create better citizens of this society and this nation. Only with conviction that we can create convictions in younger minds, and only by becoming models that we can create archetype Bharatiyas to our society.

Once the teacher is a convinced Bharatiya, then his task becomes normal and even routine, with no special efforts. Again, in some societies within our nation this may be done easily, but in some other societies this shall face challenges from the 'Tridoshas'. Here in Gujarat, it is a very easy task to raise the spirit of nationalism, spirituality and civic consciousness, but in some other societies this may create many challenges. However, a true teacher who is trying to become a Guru shall fight it all out; for he shall draw the needed strength from his own tradition, which is always a living one right in front of him, above him, and covering him.

In this Gurupurnima, let us all try to become Gurus and Acharyas, let us help others to become so, and let us contribute our little, to a nation where it had been our fortune to have been born. Indeed it is a great fortune to have been born in Bharat, and born a Hindu. ❑

(Professor of Philosophy, The Maharaja Sayajirao University of Baroda)

Challenges for a Teacher

With the passage of time things have changed drastically not only in society's behaviour but also technologically and vision of the student-teacher relationship. Now a days it's really difficult to get a job of a teacher and if one gets it through any means his/her objectives cannot remain to be same as we expect ideally. Same is with students they are more concerned about their career that too about their financial status, it does not mean from where they have studied and in which branch they have studied. There are many factors which govern present day education system, may it be design of curricula or any other aspect. For parents education of their children have become status symbol leave aside morale values which definitely affects their behaviour in the pattern of the society. Change in family pattern has made parents more focused on their wards then previous times.

❑ **Dr. A. K. Gupta**

Our society has been rich in its Guru Shishya Parampara right from ancient times. In fact Ashram Vyawastha has enriched it. Jyotisha, an important segment of our traditional education system, has shown assignment of different trends to every planet e.g. broadly referring Jupiter i.e. Brahaspati for Vidya and Venus i.e. Sukra for Avidya. Teacher in old times used to get high respect and expected to behave like a saint and work for betterment of the society.

With the passage of time things have changed drastically not only in society's behaviour but also technologically and vision of the student- teacher relationship. Now a days it's really difficult to get a job of a teacher and if one gets it through any means his/her objectives cannot remain to be same as we expect ideally. Same is with students they are more concerned about their career that too about their financial status, it does not mean from where they have studied and in which branch they have studied. There are many factors which govern present day education system, may it be design of curricula or any other aspect. For parents education of their children have become status symbol leave aside morale values which definitely affects their behaviour in the pattern of the society. Change in family pattern has made parents more focused on their wards then previous times.

Technological advancements have made it more challenging for a teacher to perform in a class. Use of mobile phones and other smart gadgets have given them powerful tools to use and share on social sites, without much to rethink about what they are doing and how it's going to affect the society. Even use of internet in positive direction has become less preferred then its negative direction.

Even nowadays use legal provisions against a teacher for his rightful approach by female students/ scholars and or faculty members have raised provisions of latest laws. A teacher has to be very careful about dealing with them. Since unlawful favours if not given may attract such cases at large. Even if in many cases there is no element of sexual harassment but provisions of law put a sincere teacher in a pitiable situation. Even Administration puts it in long pending state so as to avoid defamation of the institution, although it may not be true in every case. There may be personal or political rivalry which may fetch such a situation to occur. Awareness is lacking in this regard therefore some important provisions in Government of India gazette notifications issued by the two ministries namely Mahila avam Bal Vikas (No 593 dated 9th Dec 2013) and Law and justice (No 18 dated 23rd Aril 2013) ministries are cited for reference: Definition of sexual harassment or otherwise internal committee shall comprise like:

Complaint

Manner of inquiry into complaint. (1) subject to the provisions of section 11, at the time of filing the complaint, the complainant shall submit to the complaints committee, six copies of the complaint along with supporting documents and the name and addresses of the witnesses.

(2) On recepit of the complaint, the complaints committee shall send one of the copies received from the aggrieved woman under sub-rule (1) to the respondent within a period of seven working days.

(3) The respondent shall file his reply to the complaint along with his list of documents and names and addresses of witnesses, within a period not exceeding ten working days from the date of receipt of the documents specified under sub-rule (1).

Other relief to complainant during pendency of inquiry. The complaints committee at the written request of the aggrieved woman may recommend to the employer to-

(a) restrain the respondent from

reporting on the work performance of the aggrieved woman or writing her confidential report and assign the same to another officer.

(b) restrain the respondent in case of an educational institution from supervising any academic activity of the aggrieved woman.

9.(1) any aggrieved woman may make, in writing, a complaint of sexual harassment at workplace to the internal committee if so constituted, or the Local Committee, in case it is not so constituted, within a period of three months from the date of incident and in case of a series of incidents, within a period of three months from the date of last incident.

Conciliation

10. (1) The Internal Committee or, as the case may be the local committee, may before initiating an inquiry under section 11 and at the request of the aggrieved woman take stops to settle the matter between her and the respondent through conciliation.

(3) The Internal committee or the Local Committee, as the case may be, shall provide the copies of the settlement as recorded under sub-section (2) to the aggrieved woman and the respondent.

(4) Where a settlement is arrived at under sub-section (1), no further inquiry shall be conducted by the Internal Committee or the Local Committee, as the case may be.

Inquiry in to the matter

12. (1) During the pendency of an inquiry, on a written request made by the aggrieved woman, the Internal Committee or the Local Committee as the case may be, may recommend to the employer to :-

(a) transfer the aggrieved woman or the respondent to any other workplace, or

(b) grant leave to the aggrieved woman up to a period of three months or

(c) grant such other relief to the aggrieved woman as may be prescribed.

Action after inquiry

(3) Where the Internal Committee or the Local Committee, as the case may be, arrives at the conclusion that the allegation against the respondent has been proved. it shall recommend to the employer or the District Officer, as the case may be-

(i) to take action for sexual harassment as a misconduct in accordance with the provisions of the scrvice rules applicable to the respondent or where no such service rules have been made, in such manner as may be prescribed.

(ii) to deduct, notwithstanding anything in the service rules applicable to the respondent, from the salary or wages of the respondent such sum as it may consider appropriate to be paid to the aggrieved woman or to her legal heirs, as it may determine, in accordance with the provisions of section 15.

Provided that in case the employer is unable to make such deduction from the salary of the respondent due to his being absent from duty or cessation of employment it may direct to the respondent to pay such sum to the aggrieved woman :

Provided further that in case the respondent fails to pay the sum refrerred to in clause (ii), the Internal committee or, as the case may be, the Local Committee may forward the order for recovery of the sum as an arrear of land revenue to the concerned District Officers.

Time for action to be taken

(4) The employer or the District Officer shall act upon the recommendation within sixty days of its receipt by him.

Provisions for false allegations

14. (1) Where the Internal committee or the local Committee, as the case may be, arrives at a conclusion that the allegation against the respondent is malicious or the aggrieved woman or any other person making the complaint has made the complaint knowing it to be false or the aggrieved woman or any other person making the complaint has produced may forged or misleading document, it may recommend to the employer or the District Officer, as the case may be, to take action against the woman or the person who has made the complaint under sub-section (1) or subsection (2) of section 9, as the case may be, in accordance with the pro-

visions of the service rules applicable to her or him or where no such services rules exist, in such manner as may be prescribed.

Awareness programmes

(c) organise workshop and awareness programmes at regular intervals for sensitising the employees with the provisions of the Act and orientation programmes for the members of the internal committee in the manner as may be prescribedl .

Reporting by the Employer

22. The employer shall include in its report the number of cases filed, if any, and their disposal under this Act in the annual report of his organisation or where no such report is required to be prepared intimate such number of cases, if any, to the District Officer.

Monitoring by the Government

25. (1) The appropriate Government, on being satisfied that it is necessary in the public interest or in the interest of women employees at a workplace to do so, by order in writing -

(a) call upon any employer or District Officer to furnish in writing such information relating to sexual harassment as it may require,

(b) authorise any officer to make inspection of the records and workplace in relation to sexual harassment, who shall submit a report of such inspection to it within such period as may be specified in the order. More said and done, this type of activities should be prevented by collective efforts because this does not give good picture of the institution as a whole. The provisions are referred to just for awareness and not to aggravate the already worse situation.

Every attempt should be made to focus on need of the hour i.e. demographic changes in the society i.e. more proportion of the younger generation their need for better education and better employment opportunities with proper morale education to build good sanskars in them. This can only be achieved by good teacher student relation with proper support from parents.

If while being a student of the past, a man also understands the new things which surround him, he may be used as a teacher.

A teacher affects eternity; he can never tell where his influence stops.- A famous saying With this we can hope and move forward to look forward for old times of our nation being termed as Golden Bird in the world. ❑

(Professor, JNV Universtiy, Jodhpur (Raj.))

Liberal marking system has made life tougher for college aspirants

Sleepless nights. This is probably what students eyeing for seats in Delhi University (DU) colleges must be going through these days. The reason: DU's undergraduate admission is likely to see a new high thanks to the high scores in the Central Board of Secondary Education (CBSE) exams. In the 2014 Class 12 CBSE results, the number of students who scored 95% and above is 8,971, up by nearly 3,000, and the number of 90% and above scorers has reached 59,591, up by 15,000, and crossing the 50,000-mark for the first time ever in the history of the board exam. Five hundred students scored 99% and above in economics, while 622 scored 100% in chemistry. In biology, 791 students scored 99% and above, while 480 students scored 98% and above in physics. Reports indicated that most colleges will set the cut-offs in their first lists above 95%. The first cut off list will be released tomorrow, followed by up to nine more lists, depending on seat availability, till July 21. While the total number of applications in DU is around 270,000, the number of seats available is 54,000.

One of the main reasons for such high marks is the CBSE's liberal marking system, which the board introduced in 2006 after it came under pressure because of incidents of academic pressure-related suicides. Under the new scheme, the emphasis became more on objective questions, evaluators were told how to award marks and question papers were set with well-defined answers. But the irony of the situation is that what it set out to correct (too much pressure on students) has spawned another set of problems that is giving students sleepless nights. Piggybacking on high marks, the DU has started keeping abnormally high cut-offs and second, the CBSE's marking system also has had a domino effect: other boards and state boards are opting for liberal marking so that their students also have a fair chance in DU admissions. Both school and college teachers often complain that such 95+ marks do not reflect a student's calibre. And teachers have often told the media that they are being "forced" to award high marks even to undeserving students and this is one of the main reasons why students are not found employable even after graduating from top colleges.

In an interview HRD minister Smriti Irani has said that the government will work on a new education policy. The new policy must try to redress the current situation that has developed due to uneven marking across boards and debate what CNR Rao, former scientific adviser to the UPA, had suggested some years ago: An all-India common entrance test for higher education, including medical and technical courses.

वर्तमान में शिक्षक की भूमिका

हमारे पूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने भी अपनी सफलता का श्रेय अपने शिक्षकों को दिया है। अत: शिक्षक अपनी भूमिका और स्वयं को इस प्रकार प्रतिष्ठित करें कि विद्यार्थी भी अपने कॅरियर में शिक्षण को वैकल्पिक या अन्तिम विकल्प के रूप में चयन नहीं करें। वह प्राथमिकता से शिक्षण कार्य को अपने कॅरियर के रूप में अपनाएं तथा उसमें शिक्षक के प्रति निष्ठा का भाव स्वत: जाग्रत हो। वर्तमान आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षक ही शिक्षा में प्रयोगधर्मिता व संवेदनशीलता दोनों का समावेश कर सकता है। इससे शिक्षा के प्रति विद्यार्थी की अनुभूति में तेजी होगी। शिक्षा में अभिवृद्धि से राष्ट्रप्रेम का भाव जाग्रत होगा और हमारी राष्ट्रीय एकता भी सुदृढ़ हो सकेगी। शिक्षक के इन दायित्वों का निर्वहन करते हुए हम एक प्रतिष्ठित लोकतंत्र के लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक हो सकते हैं और एक मजबूत राष्ट्र के भविष्य के निर्माण की नींव रख सकते हैं।

❑ डॉ. श्रीमती रेखा भट्ट

वर्तमान परिस्थितियों में भारतीय शिक्षा में शिक्षक की भूमिका अहम् है, क्योंकि यहाँ प्राचीनकाल से ही शिक्षा में जीवन मूल्यों और राष्ट्रीय भावनाओं का समावेश रहा है। यहाँ शिक्षा में मानवता के गुण जैसे दया, करुणा, सेवा आदि अन्तर्निहित रहे है, किन्तु मैकाले शिक्षा पद्धति अपनाने के साथ ही ये मूल्य धीरे-धीरे लुप्त होते जा रहे हैं। आज इन्हें शिक्षा में पुन:स्थापित करने की आवश्यकता है तथा इसका समस्त दायित्व वर्तमान शिक्षक पर है।

आज जहाँ कम्प्यूटर और ई-बुक का दौर है, वहाँ शिक्षक की आवश्यकता ही नहीं होनी चाहिए। परन्तु उसका महत्व कम नहीं हुआ है। आज शिक्षक की भूमिका में परिवर्तन हुआ है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में हमारी शिक्षा प्रणाली वैश्वीकरण से प्रभावित है। ऐसे में शिक्षा में विदेशी निवेश होने तथा निजीकरण होने से शिक्षा में व्यवसायीकरण को बढ़ावा मिला है। सभी निजी एवं बड़ी संस्थाओं में आज शिक्षक एक व्यावसायिक सलाहकार की भूमिका निभा रहे हैं। शिक्षा का समानीकरण भी शिक्षकों के लिए चुनौती है, किन्तु विदेशी निवेश ने शिक्षकों के समक्ष कई चुनौतियाँ खड़ी कर दी है। इस परिस्थिति में शिक्षक के दायित्व भी बढ़ गये है। वर्तमान परिस्थिति में आवश्यक है कि शिक्षा को अधिक उपयोगी बनाया जावें। इससे विद्यार्थियों की संख्या में वृद्धि होगी।

आज देश में अधिकांश संस्थान केवल डिग्रियाँ प्रदान करते है। इससे विद्यार्थी की योग्यता अर्जित करने के प्रयासों में कमी आयी है। शिक्षक ऐसे विद्यार्थियों के लिए विश्वसनीयता कायम करें और ऐसा वातावरण निर्मित करें, जहाँ वे परिश्रम से तथा अपनी योग्यता से ही लक्ष्य हासिल कर सकें। हमें विद्यार्थी में सीखने की प्रक्रिया विकसित करनी होगी तथा उन्हें उनकी रुचि के अनुरूप विषय के चयन में उचित मार्गदर्शन प्रदान कर उन्हें राष्ट्र व समाज के लिए उपयोगी बनाना होगा। वे अपनी योग्यता व कुशलता से राष्ट्र की आवश्यकताओं को पहचानते हुए विदेशी निवेश को पीछे छोड़ राष्ट्र को उत्पादन तथा तकनीक में आगे ले जा सकते हैं।

आज रोजगार हेतु पदों को भरने के लिए केवल डिग्री को ही आधार नहीं माना जाता है। नियुक्ति के लिए पात्र को कई आयामों पर जाँचते है, वे अपने कार्य क्षेत्र में कितने फायदेमन्द साबित होंगे। अत: केवल डिग्री देकर बेरोजगारों की फौज न खड़ी हो इसके लिए शिक्षक विद्यार्थी में मौलिक गुणों का विकास करें ताकि वे अपने कार्य क्षेत्र में भी सफलता प्राप्त कर सकें। आज स्पर्द्धा का युग है, किन्तु विद्यार्थी आपसी स्पर्द्धा तक ही सीमित न रह जाये वरन् उसमें स्वयं को विकसित करने की जागरुकता भी पैदा हो, यह वर्तमान शिक्षक का दायित्व है।

वर्तमान परिस्थितियों में विद्यार्थी का रुझान केवल भौतिक संसाधनों की ओर है तथा वे भौतिक

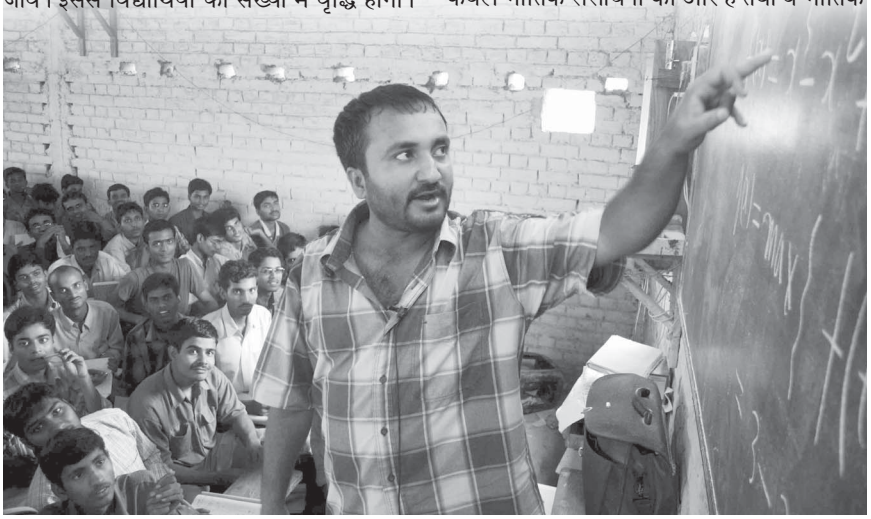

लक्ष्यों की प्राप्ति में ही भटक रहे हैं। अत: उन्हें जीवन मूल्यों से अवगत कराने का महत्वपूर्ण कार्य शिक्षक ही कर सकता है। इसके लिए हमें शिक्षा में गुणात्मक वृद्धि करनी होगी। शिक्षकों को शिक्षा में पारदर्शिता लानी होगी। अपनी निष्ठा व ईमानदारी से शिक्षक यह सुनिश्चित करें कि विद्यार्थी में ज्ञान के बौद्धिक विकास के साथ-साथ जनहित की भावना का भी विकास हो। शिक्षक का यह प्रयास हो कि शिक्षा आड़म्बर मुक्त बने, इससे शिक्षा आर्थिक बोझ से मुक्त हो सकेगी और सर्वसुलभ हो सकेगी। आज शिक्षा के व्यवसायीकरण में मीडिया का भी बहुत बड़ा हाथ है और इसी वजह से शिक्षण संस्थान सुनियोजित तरीके से अधिक से अधिक मुनाफा प्राप्त करने के केन्द्र बन गए है। ऐसे में शिक्षक तथा विद्यार्थी के बीच गुरु-शिष्य परम्परा का सम्बन्ध बनाये रखना, शिष्य को सुसंस्कृत बनाये रखना भी शिक्षक की महती जिम्मेदारी है। शिक्षक अपनी संस्कृति का ज्ञान ही नहीं कराते, वरन् कई उत्सवों व कार्यक्रमों के माध्यम से उन्हें हमारी संस्कृति से जोड़ते भी है और विद्यार्थी में भारतीय संस्कारों का संचार करते है। आधुनिकता की दौड़ में भी अपनी परम्पराओं को शिक्षण के माध्यम से जीवित रखने का कार्य शिक्षक कर सकते हैं।

विद्यार्थी संस्कार विहीन तथा मूल्यहीन संस्कृति से संतृप्त समाज की ओर अग्रसर न हों इसके लिए शिक्षक ही उचित मार्गदर्शन कर सकते है। शिक्षा व्यवस्था में शिक्षक ही एक ऐसा आधार स्तम्भ है, जो विद्यार्थी को शिक्षा व्यवस्था के प्रति आशावान बनाए रख सकता है। हमारे पूर्व राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने भी अपनी सफलता का श्रेय अपने शिक्षकों को दिया है। अत: शिक्षक अपनी भूमिका और स्वयं को इस प्रकार प्रतिष्ठित करें कि विद्यार्थी भी अपने कॅरियर में शिक्षण को वैकल्पिक या अन्तिम विकल्प के रूप में चयन नहीं करें। वह प्राथमिकता से शिक्षण कार्य को अपने कॅरियर के रूप में अपनाएं तथा उसमें शिक्षक के प्रति निष्ठा का भाव स्वत: जाग्रत हो। वर्तमान आवश्यकताओं के अनुरूप शिक्षक ही शिक्षा में प्रयोगधर्मिता व संवेदनशीलता दोनों का समावेश कर सकता है। इससे शिक्षा के प्रति विद्यार्थी की अनुभूति में तेजी होगी।

शिक्षा में अभिवृद्धि से राष्ट्रप्रेम का भाव जाग्रत होगा और हमारी राष्ट्रीय एकता भी सुदृढ़ हो सकेगी। शिक्षक के इन दायित्वों का निर्वहन करते हुए हम एक प्रतिष्ठित लोकतंत्र के लक्ष्यों की प्राप्ति में सहायक हो सकते हैं और एक मजबूत राष्ट्र के भविष्य के निर्माण की नींव रख सकते हैं।

शिक्षक के प्रयत्नों से ही भारत की शिक्षा व्यवस्था वैश्विक मानदण्डों पर खरी उतर सकती है और यही शिक्षा देश में सामाजिक व आर्थिक परिवर्तन का माध्यम बन सकती है। शिक्षक ही आज की चरमराती शिक्षा व्यवस्था में भारतीय संस्कारों व परम्पराओं का संचार कर वर्तमान परिस्थितियों में भारतीय शिक्षा को नई पहचान प्रदान कर सकते हैं। अत: आवश्यकता है कि वर्तमान परिस्थितियों में शिक्षकों को शिक्षा जगत की तथा समाज की चुनौतियों को समझकर अपनी भूमिका को सही रूप से निभाने के लिए तैयार होना पड़ेगा, तभी हम महान लक्ष्यों को प्राप्त कर सकेंगे। ❑

(व्याख्याता, रसायनशास्त्र, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान)

Teacher Training

Weakest Link in Education Chain

❑ **Subodh Varma**

India is facing a double crisis of both quality and quantity of school teachers. According to the 12th five year plan there is an estimated shortage of 12.58 lakh teachers just at the elementary level. In addition, several States face an acute problem of untrained teachers. Tight fisted state governments are merrily employing contractual teachers at low pay scales sacrificing quality and discouraging talent. "Earlier Rajasthan too did not allow commerce graduates to enroll for BEd but after a high court order in 2005 where the NCTE's supremacy was upheld, the state government started allowing them," he told TOI. Teachers' education has been plagued by substandard institutions and policy confusion for years.

One of the most important streams of higher education is teachers' training. It is from here that thousands of young men and women spread out to teach children in schools, virtually holding the destiny of the future generations in their hands. Yet teachers' training remains one of the most chaotic, neglected and deficient sectors of India's vast education system.

Sadhana Singh of Kanpur discovered this last month when she tried to enroll for the B.Ed program in Delhi. The eligibility conditions laid down by the National Council for Teachers Education (NCTE) are straightforward: any graduate with at least 50% marks can apply for admission. Since the NCTE is the apex regulatory body for teachers' education, setting down the rules for everything from eligibility to facility standards, Sadhana was confident that she would get admission in Delhi's prestigious B.Ed programs in Delhi University or Jamia Milia.

She couldn't have been more wrong. For both these universities she was declared not eligible because she was a commerce graduate. She is not alone in this — there are thousands of commerce graduates who are denied admission to BEd programs, although such rules are in direct violation of NCTE norms and regulations. Similar complaints have been received from Tamil Nadu and Rajasthan.

Rama Mathew, director of Delhi University's Central Institute of Education (CIE) where BEd and MEd courses are taught says that the eligibility conditions were arrived at after past experience and approved by the university Academic Council. She was unaware that NCTE norms do not allow this prohibition of BCom graduates.

"It appears that there is a disjunct between our university and the NCTE. We will write to them to change the eligibility conditions," she said after the violation was pointed out.

Her colleague in CIE, Poonam Batra is heading a committee set up by the NCTE on the Supreme Court's advise to reformulate all norms and rules of the NCTE. In the new recommendations, the committee has maintained the previous eligibility conditions of any graduate with 50% marks.

Poonam Batra, who was a member of the Verma Commission set up in 2011 on the SC's orders to look into teachers' education, was aghast when TOI told her that her own institute was not allowing commerce graduates. She asserted that as per both existing and

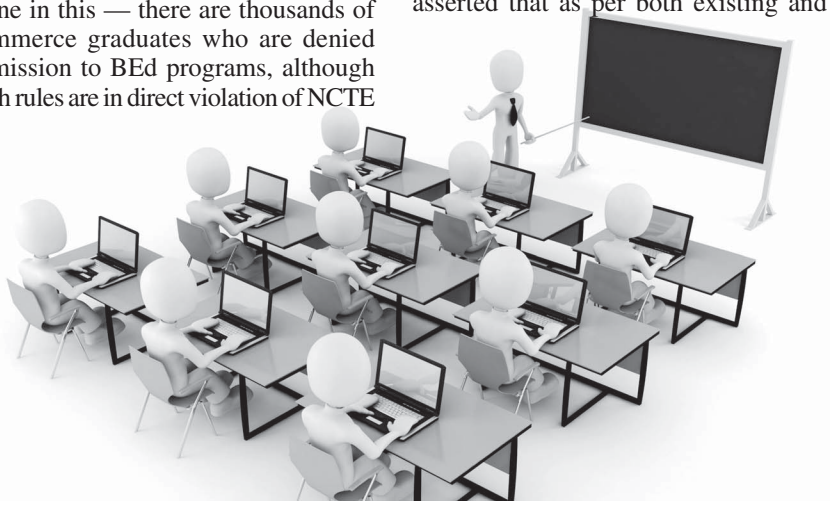

proposed norms, all graduates should be allowed.

Venita Kaul, a professor in Ambedkar University Delhi who was initially nominated to the Batra committee but resigned, told TOI that commerce is not taught in classes up to 10th and so there is no need for commerce graduates to be admitted.

"Moreover, NCTE norms are guidelines, states can adjust according to their local conditions," she said. This is clearly not the case: the NCTE is a statutory body and it lays down the law for teachers' education.

Farida Khan, professor in Jamia Milia and member of the Batra committee was also surprised that her own university was not allowing commerce graduates in violation of NCTE norms.

A senior teachers' education professor in Rajasthan, who wished to remain unnamed, told TOI that this confusion among the top brass of the NCTE and the blatant flouting of rules at the ground level is rampant across the country. "Earlier Rajasthan too did not allow commerce graduates to enroll for BEd but after a high court order in 2005 where the NCTE's supremacy was upheld, the state government started allowing them," he told TOI.

Teachers' education has been plagued by sub-standard institutions and policy confusion for years. India is facing a double crisis of both quality and quantity of school teachers. According to the 12th five year plan there is an estimated shortage of 12.58 lakh teachers just at the elementary level. In addition, several States face an acute problem of untrained teachers. Tight fisted state governments are merrily employing contractual teachers at low pay scales sacrificing quality and discouraging talent. ❑

HRD Report
Muslim Enrolment Goes Up In Schools

Muslim enrolment in schools has gone up marginally while there has been a slight decline in case of the SC/ST community. Only children belonging to Other Backward Classes have shown a perceptible increase in enrolment.

Data for 2013-14, released on Wednesday by HRD minister Smriti Z Irani, show that as per the Educational Development Index, Puducherry is at number one, followed by Lakshadweep, Tamil Nadu, Himachal Pradesh and Delhi.

Despite massive privatization of school education, more than 60% of enrolment is in government schools, little over 8% in private aided schools, 27.8% in private unaided schools, 35.81% in private managements and over two per cent in unrecognized schools. Government aided schools with private management dominate in Goa (63.03%), Kerala (42.36%) and Maharashtra (37.8%).

As per the new data, Muslim enrolment at primary level in 2013-14 went up marginally to 14.35% from 14.20% in 2012-13. At the upper primary level enrolment was 12.52%, up from 12.11% in 2012-13. In West Bengal, Gujarat, Bihar and Uttar Pradesh there has been gradual, though not significant, increase in enrolment. In Uttarakhand, there has been marginal decline in Muslim enrolment. Enrolment of girls both at primary and upper primary has remained unchanged at 49%.

At primary level, OBC enrolment has gone up to 44.1% from 42.9% while at the upper primary level, it went up to 44.44% from 43.66% in 2012-13. Most perceptible increase can be noticed in West Bengal, Puducherry and Kerala. Similar trend can be noticed at the upper primary level. Girls constitute nearly half of enrolment, both at primary and upper primary levels.

Enrolment of SC children at primary and upper primary levels came down to 19.72% from 20.24% in 2012-13. Except for HP and West Bengal, a marginal decline in SC enrolment can be seen in most states, especially Bihar, UP, MP and Maharashtra.

One positive aspect of the latest data is that percentage of teachers involved in non-teaching assignments to total teachers has come down. In 2013-14, 2.48% of teachers did non-teaching work that cost 16 working days. While the number of days lost has remained unchanged from 2012-13, percentage of teachers doing such work has come down substantially from 5.49%.

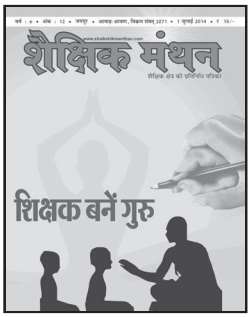

शिक्षा प्रदान करना आज भी सबसे गुरुतर दायित्व है और शिक्षक ही वह धुरी है, जो किसी जाति, धर्म, संप्रदाय और आर्थिक स्थिति के मुताबिक भेदभाव और पक्षपात किए बिना सभी को समान रूप से ज्ञान प्रदान कर सकता है। बच्चों का भविष्य संवारने से लेकर उन्हें देश का आदर्श नागरिक बनाने तक में शिक्षक की अहम भूमिका होती है। यहां तक कि प्रवीणता प्राप्त इन बच्चों के सुनहरे सपने बुनने और फिर सपनों को हकीकत में बदलने तक में शिक्षक का परिश्रम शामिल होता है। फिर ऐसी क्या कमी है इस आदर्श पेशे में कि कोई भी होशियार विद्यार्थी अपने गुरु के पथ पर नहीं चलना चाहता, नई पीढ़ी शिक्षा को आजीविका का साधन नहीं बनाना चाहता? पढ़ाकू छात्रों की अध्यापन जैसे पेशे के प्रति घटती रुचि शिक्षा-व्यवस्था के साथ-साथ समाज के लिए भी चिंता का विषय है।

बाजार में शिक्षक

❑ संजीव शर्मा

हाल ही में सीबीएसई सहित देश के विभिन्न राज्य शिक्षा बोर्डों के परीक्षा परिणाम घोषित हुए। हमेशा की तरह अव्वल आये छात्र-छात्राओं ने अपने भविष्य के सुनहरे सपने मीडिया के साथ साझा किए। खबरों से पता चला कि मेधावी बच्चों में से कोई नामी आइआइटी संस्थान में जाना चाहता है, तो कोई आइआइएम में, किसी के सपने डॉक्टर बनने में बसे हैं तो कोई कॉरपोरेट जगत के तख्तो-ताज के करीब पहुंचने की ख्वाहिश रखता है। देश भर की प्रवीणता सूचियों में स्थान बनाने वाले बच्चों के सपनों में मुझे एक जो बात सबसे ज्यादा खटकी, वह यह थी कि कोई भी मेधावी बच्चा भविष्य में शिक्षक नहीं बनना चाहता।

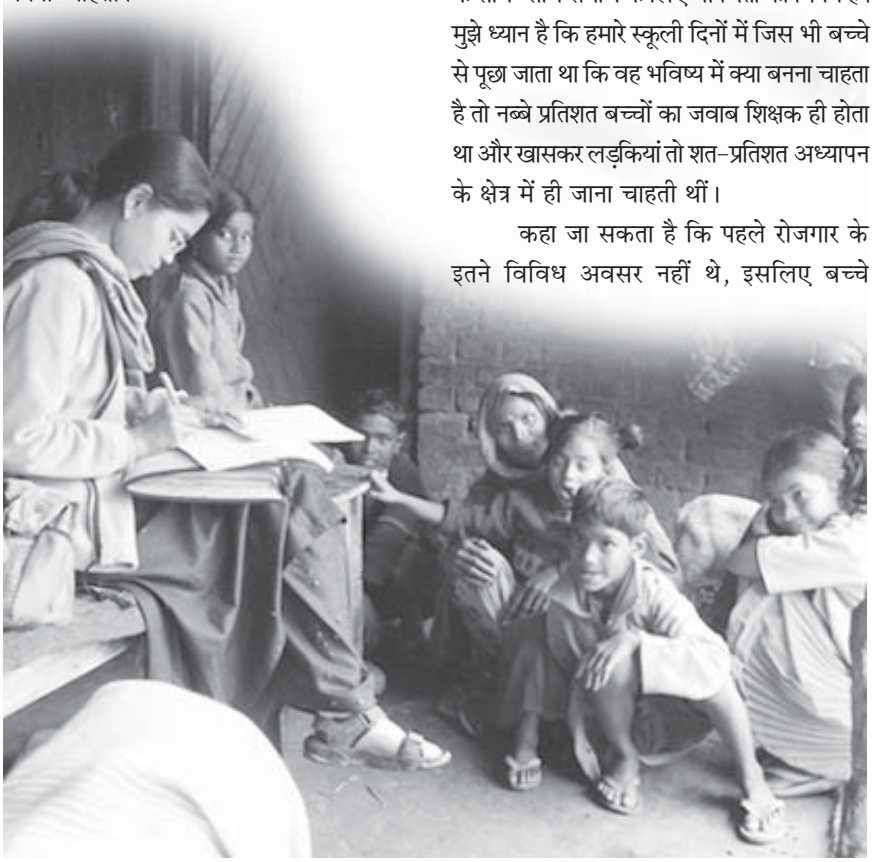

शिक्षा प्रदान करना आज भी सबसे गुरुतर दायित्व है और शिक्षक ही वह धुरी है, जो किसी जाति, धर्म, संप्रदाय और आर्थिक स्थिति के मुताबिक भेदभाव और पक्षपात किए बिना सभी को समान रूप से ज्ञान प्रदान कर सकता है। बच्चों का भविष्य संवारने से लेकर उन्हें देश का आदर्श नागरिक बनाने तक में शिक्षक की अहम भूमिका होती है। यहां तक कि प्रवीणता प्राप्त इन बच्चों के सुनहरे सपने बुनने और फिर सपनों को हकीकत में बदलने तक में शिक्षक का परिश्रम शामिल होता है। फिर ऐसी क्या कमी है इस आदर्श पेशे में कि कोई भी होशियार विद्यार्थी अपने गुरु के पथ पर नहीं चलना चाहता, नई पीढ़ी शिक्षा को आजीविका का साधन नहीं बनाना चाहता? पढ़ाकू छात्रों की अध्यापन जैसे पेशे के प्रति घटती रुचि शिक्षा-व्यवस्था के साथ-साथ समाज के लिए भी चिंता का विषय है। मुझे ध्यान है कि हमारे स्कूली दिनों में जिस भी बच्चे से पूछा जाता था कि वह भविष्य में क्या बनना चाहता है तो नब्बे प्रतिशत बच्चों का जवाब शिक्षक ही होता था और खासकर लड़कियां तो शत-प्रतिशत अध्यापन के क्षेत्र में ही जाना चाहती थीं।

कहा जा सकता है कि पहले रोजगार के इतने विविध अवसर नहीं थे, इसलिए बच्चे

अध्यापन से ज्यादा सोच ही नहीं पाते थे। लेकिन अब आइटी से लेकर बायो-इन्फोर्मेटिक्स जैसे कई ज्ञात-अज्ञात विषयों की बाढ़-सी आ गई है। सूचना क्रांति ने भी बच्चों के सामने पेशा चुनने की जागरुकता और तुलनात्मक समझ पहले से बेहतर कर दी है। अब पेशे के चयन में 'पैसा' एक अहम कारक बन गया है और नौकरियों को 'सेवा से ज्यादा मेवा' के दृष्टिकोण से तौला जाने लगा है। उपभोक्तावाद की मौजूदा आंधी में शिक्षा-कर्म से बस दाल-रोटी का ही जुगाड़ हो सकता है। घर, कार और मध्यवर्गीय परिवारों की आकांक्षाओं की उड़ान के अनुरूप पंख नहीं जुटाए जा सकते!

हालांकि यह चिंता केवल स्कूली स्तर पर अध्यापन में घटती रुचि को लेकर है, क्योंकि कॉलेज स्तर पर तो शिक्षक वेतन और सुविधाओं के मामले में समकक्ष पेशों से भी कहीं आगे हैं। अच्छे नागरिक की नींव स्कूल से ही पड़ती है। कॉलेज तक आते-आते तो आज के बच्चे जागरुक और सत्ता परिवर्तन में अग्रणी मतदाता बन जाते हैं और सूचना विस्फोट के सहारे अपने व्यक्तित्व को एक सांचे में ढाल चुके होते हैं। दुर्भाग्य है कि सरकारों की अनदेखी के कारण आजादी के छह दशक बाद भी सरकारी स्कूल बस नाम के विद्यालय होकर निजीकरण की चपेट में दम तोड़ रहे हैं। वहीं स्कूली शिक्षा कॉरपोरेट घरानों और धन्ना सेठों के हाथों में जाकर मुनाफाखोरी का एक और माध्यम बन गई है। इस बदलाव से स्कूल नई पीढ़ी को 'रोबोटिक जेनरेशन' के रूप में ढालने के कारखानों में बदल रहे हैं तो ऐसे में बच्चों को कौन डॉक्टर सर्वपल्ली राधाकृष्णन, गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर और महामना मदन मोहन मालवीय बनाएगा! कमाई की अंधी दौड़ में तो बस कमाना ही सिखाया जा सकता है और कमाई के पैमाने पर अध्यापक की क्या बिसात! ❑

शिक्षा की बदहाली

देश के विकास का सबसे महत्वपूर्ण कारक है शिक्षा जो अक्षरज्ञान से लेकर व्यावसायिक या कौशल प्रशिक्षण तक के पड़ाव पूरे करते हुए सार्थकता सिद्ध करती है। राष्ट्रपति के अभिभाषण पर धन्यवाद प्रस्ताव के दौरान संसद में अपने भाषण में प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने शिक्षा के क्षेत्र में कौशल प्रशिक्षण पर सबसे ज्यादा जोर दिया क्योंकि इसके बिना राष्ट्र की आर्थिक प्रगति का सपना कभी साकार नहीं हो पाएगा। प्रधानमंत्री की इच्छाशक्ति को देखते हुए हालांकि इस दिशा में उम्मीद बंधती दिख रही है लेकिन बेतरतीब और अनियंत्रित जनसंख्या के कारण इस सपने का पूरी तरह साकार होना फिलहाल आसमान से तारे तोड़ लाने के समान माना जा रहा है।

सूचना के अधिकार के तहत प्राप्त आंकड़े बताते हैं कि एक से चौदह वर्ष के नौनिहालों के लिए अनिवार्य शिक्षा और सर्व शिक्षा अभियान पर पिछले तीन सालों में करीब सवा लाख करोड़ रुपये खर्च किये जाने के बावजूद स्थिति में संतोषजनक बदलाव नहीं दिख रहा है। आर्थिक रूप से कमजोर हैसियत वाले बच्चों के लिए 25 प्रतिशत आरक्षण, मानसिक और शारीरिक रूप से अशक्त बच्चों के लिए शिक्षा योग्य अनुकूल माहौल बनाने के साथ ही गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के क्षेत्र में सफलता पाने के लिए अभी लंबा सफर तय करना है। सवाल है कि कानून बना देने मात्र से किसी समस्या का समाधान होना होता तो आजादी के इन 67 सालों में राष्ट्रीय प्रगति के नाम पर जितनी योजनाएं और कानून बने हैं, वह सिद्धांत रूप में इतने सशक्त हैं कि देश को विकसित देशों की अग्रिम पंक्ति में खड़ा दिखना चाहिए था। लेकिन सच यह है कि तमाम कारणों से देश के अधिसंख्य नौनिहाल प्राथमिक शिक्षा पाने से ही वंचित हैं और शिक्षार्जन का प्रतिशत उत्तरोत्तर कम होता जाता है। साक्षरता की जहां तक बात है तो आजादी के समय से लेकर अब तक हालांकि साक्षरता की दर में अपेक्षित बढ़ोतरी हुई है। 1947 में जहां साक्षरता का प्रतिशत मात्र 18 था, वहीं 2011 तक यह 75.06 आंका गया है; लेकिन सवाल यदि गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और कौशल प्रशिक्षण का उठे तो स्थिति बहुत ही बदहाल नजर आती है।

समय-समय पर प्रकाश में आने वाले शिक्षा संबंधी नियंत्रण सर्वेक्षणों में हमारे प्रशिक्षण संस्थानों या विविद्यालयों का पहले सौ-पचास तो क्या दो सौ-सवा दो सौ में भी कहीं नाम दर्ज नहीं हो पाता है जबकि कभी हमारे समकक्ष आंका जाने वाला चीन हमसे कहीं आगे निकल चुका है। सवा अरब की आबादी वाले अपने देश के लिए यह बहुत ही शर्मनाक स्थिति है। शिक्षा के क्षेत्र में असमानता प्रतिभाओं की राह का सबसे बड़ा रोड़ा है। गरीबी के कारण अनेक प्रतिभाशाली बच्चे सुविधासंपन्न स्कूलों में नहीं पढ़ पाते हैं जबकि तमाम कोणों से सरकारी स्कूलों के बदहाली से सब वाकिफ हैं। शिक्षा के क्षेत्र में लैंगिक असमानता भी एक बहुत बड़ी विडम्बना है। इन सारी स्थितियों के सुधरे बिना देश का कल्याण नहीं। ❑

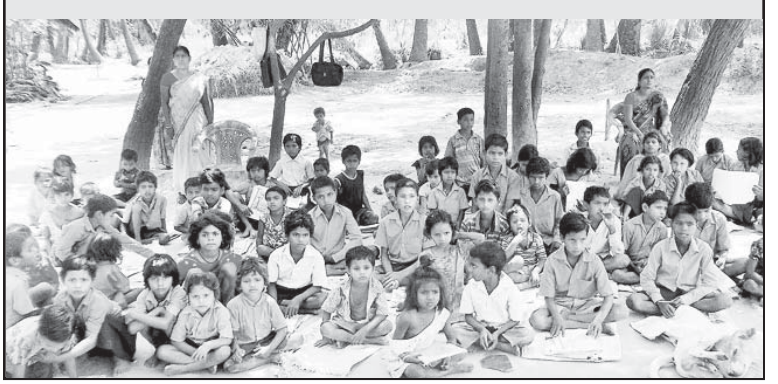

आशंका और उम्मीद के भंवर में उच्च शिक्षा

❑ शशांक द्विवेदी

सवाल यह है कि क्या वह शिक्षा के क्षेत्र की समस्याएं ठीक से समझती हैं और देश की शिक्षा और उच्च शिक्षा की बेहतरी के लिए तत्काल क्या कदम उठाती हैं। क्योंकि पिछले एक दशक से शिक्षा के हालात बदतर ही हुए हैं। वास्तव में मौजूदा नीतियों के आधार पर विश्वस्तरीय संस्थान खड़े करना असंभव होगा। सिर्फ कुछ आईआईटी और आईआईएम के भरोसे हम विकसित राष्ट्र का सपना सच नहीं कर सकते। देश में तकनीकी शिक्षा की कुल सीटों में 95 प्रतिशत निजी कॉलेजों में हैं बाकी 5 प्रतिशत में आईआईटी, एनआईटी, ट्रिपल आईआईटी है जहां एडमिशन के लिए छात्रों में होड़ है लेकिन देश के विकास के लिए बाकी 95 प्रतिशत कॉलेजों को नजरंदाज नहीं किया जा सकता। हमें विश्वस्तरीय संस्थान खड़े करने के लिए ऐसी राष्ट्रीय नीति की जरूरत है, जो गुणवत्ता, पारदर्शिता, स्वायत्तता, विकेंद्रीकरण, जवाबदेही, विविधता और विश्व दृष्टि जैसे मूल्यों पर आधारित हो।

हाल में केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री स्मृति ईरानी की शैक्षणिक योग्यता और डिग्री पर खूब सवाल उठे हैं जबकि इससे ज्यादा महत्वपूर्ण सवाल उच्च शिक्षण संस्थानों की संख्या और गुणवत्ता को लेकर है, जिस पर तत्काल ध्यान देने की जरूरत है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में एनडीए की नई सरकार बन जाने के बाद एक बड़ा सवाल है कि क्या देश की शिक्षा और उच्च शिक्षा के हालात सुधरेंगे? क्योंकि देश में शिक्षा और उच्च शिक्षा की दशा और दिशा बेहद खराब है।

इस समय तकनीकी शिक्षा अपने सबसे बुरे दौर में है। पिछले तीन सालों से लगातार इंजीनियरिंग में लाखों सीटें खाली हैं, इसके साथ ही आईआईटी का नियंत्रण प्रभाव लगातार कम होता जा रहा है। दुनिया के टॉप 200 विश्वविद्यालयों में भी हमारे यहां से कोई विश्वविद्यालय नहीं है। कुल मिलाकर देश में उच्च और तकनीकी शिक्षा के हाल, साल दर साल बद से बदतर होते जा रहे हैं। दुनिया के ताकतवर व समृद्ध देशों की सफलता का एक बड़ा कारण विश्वस्तरीय उच्च शिक्षा ही है। अमेरिका, चीन, जापान, ब्रिटेन, फ्रांस, जर्मनी, दक्षिण कोरिया, ताइवान, सिंगापुर, मलेशिया, हांगकांग, ऑस्ट्रेलिया आदि देशों की आर्थिक प्रगति को उनकी विश्वस्तरीय उच्च शिक्षा से जोड़कर ही समझा जा सकता है। अपने यहां अनुसंधान की स्थिति, गुणवत्ता और अंतरराष्ट्रीयकरण के पैमाने पर भी आईआईटी कमतर ही साबित हुए हैं। भारत ने रूस, ब्राजील, चीन और दक्षिण अफ्रीका के साथ मिलकर ब्रिक्स के जरिये दुनिया के आर्थिक मंच पर बेशक अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है मगर तकनीकी और उच्च शिक्षा के क्षेत्र में ब्रिक्स के बाकी देशों के आगे हम कहीं नहीं ठहरते। उच्च क्या, स्कूली शिक्षा के मामले में भी हमारी स्थिति बहुत खराब है। इसी वजह से पीसा (प्रोग्राम फर इंटरनेशनल स्टूडेंट एसेसमेंट) की रैंकिंग में हमें जगह नहीं मिल पाती है। पीसा ने जहां स्कूली शिक्षा में हमारी दयनीय स्थिति उजागर की है, वहीं टाइम्स और क्यूएस रैंकिंग ने यह सोचने पर मजबूर किया कि हमारे आईआईटी इनोवेशन क्यों नहीं कर पा रहे हैं।

पिछले दिनों राष्ट्रपति प्रणब मुखर्जी ने भारतीय खनिज विद्यापीठ (आईएसएम) के दीक्षांत समारोह में तक्षशिला व नालंदा विश्वविद्यालय का स्वर्णिम युग याद करते हुए भारतीय तकनीकी संस्थानों को गौरवशाली बनाने का आह्वान किया। उन्होंने कहा कि आज हमारे देश में 16 आईआईटी, 30 एनआईटी, 359 महत्वपूर्ण तकनीकी संस्थानों के अलावा हजारों इंजीनियरिंग संस्थान हैं लेकिन ग्लोबल स्तर पर टॉप 200 विश्वविद्यालयों में कोई भी भारतीय संस्थान नहीं है। कुछ दशक पहले उच्च शिक्षा के क्षेत्र में भारत व पड़ोसी देश चीन की तुलना एक धरातल पर होती थी लेकिन आज चीन उच्च और तकनीकी शिक्षा के मामले में भारत से बहुत आगे है। 1990 में चीनी अर्थव्यवस्था में आई तेजी के बाद वहां कॉलेज और विश्वविद्यालयों को उभरने और विकसित होने का मौका दिया गया। आज चीन में दो हजार से अधिक विश्वविद्यालय और संस्थान- उच्च शिक्षा, तकनीक, प्रबंधन और चिकित्सा की गुणवत्तापूर्ण पढ़ाई के लिए जाने जाते हैं। पिछले 20 वर्ष में चीन की सरकार ने

अपने कुछ विश्वविद्यालयों जैसे बीजिंग, शिनहुआ, शंघाई, जिओटांग और सूड़ान आदि को अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर खड़ा किया। चीन ने दो-तीन दशकों में अपनी संपूर्ण शिक्षा व्यवस्था बदल दी है। उसने 1990 के मध्य में प्रोजेक्ट 211 के अंतर्गत विश्व स्तरीय विश्वविद्यालयों, उच्च शोध संस्थानों और तकनीकी हब की बड़ी श्रंखला तैयार की है। चीन को मालूम है कि आर्थिक सर्वश्रेष्ठता बेहतर तकनीकी शिक्षा, शोध और विकास पर ही निर्भर है। भारत में हर साल मात्र पांच हजार जबकि चीन में हजारों करीब छात्र पीएचडी करते हैं। केवल पीएचडी के मामले में ही नहीं, शोध पत्रों तथा पेटेंट के मामले में भी हम चीन से काफी पीछे हैं। भारत में 538 विवि और 26478 उच्चशिक्षा संस्थान हैं। जिनमें 1.60 करोड़ नौजवान पढ़ते हैं। ग्रास एनरोलमेंट के लिहाज से यह 12 प्रतिशत है जो ग्लोबल एवरेज से काफी कम है। जबकि केंद्र सरकार ने 2020 तक 30 प्रतिशत एनरोलमेंट का लक्ष्य रखा है।

देश में संस्थानों की भीड़ बढ़ाने के लिए पिछले 30 वर्ष में बहुत सारे निजी संस्थान और डीम्ड यूनिवर्सिटी खुले हैं, जिनका कोई मानक और स्तर नहीं है। देश के 153 विविद्यालयों तथा 9875 कॉलेजों में पर्याप्त बुनियादी ढांचा नहीं है। आधुनिक ज्ञान आधारित नियंत्रण अर्थव्यवस्था में अपनी पूर्ण क्षमता का दोहन करने के लिए भारत को विश्व के प्रतिष्ठित विश्वविद्यालयों की आवश्यकता है। उच्च शिक्षा का संकट संभवत: किसी भी लोकतांत्रिक देश का सबसे गहरा संकट होता है। यह संकट भारत के भविष्य को सीधे-सीधे प्रभावित करेगा। पिछले दिनों राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (एनकेसी) ने स्वीकार किया कि भारत में उच्च शिक्षा में जो संकट है, वह गहराई तक मौजूद है। देश की संवैधानिक व्यवस्था में ऐसी कोई बाध्यता नहीं है कि मंत्री बनने के लिए किसी न्यूनतम शैक्षणिक योग्यता की जरूरत होती

है। इसलिए सवाल यह नहीं कि मानव संसाधन व विकास मंत्री स्मृति ईरानी के पास कोई डिग्री है या नहीं। मुख्य सवाल यह है कि क्या वह शिक्षा के क्षेत्र की समस्याओं को ठीक से समझती हैं और देश की शिक्षा और उच्च शिक्षा की बेहतरी के लिए तत्काल क्या कदम उठाती हैं। क्योंकि पिछले एक दशक से शिक्षा के हालात बदतर ही हुए हैं। वास्तव में मौजूदा नीतियों के आधार पर विश्वस्तरीय संस्थान खड़े करना असंभव होगा। सिर्फ कुछ आईआईटी और आईआईएम के भरोसे हम विकसित राष्ट्र का सपना सच नहीं कर सकते। देश में तकनीकी शिक्षा की कुल सीटों में 95 प्रतिशत निजी कॉलेजों में हैं बाकी 5 प्रतिशत में आईआईटी, एनआईटी, ट्रिपल आईआईटी है जहां एडमिशन के लिए छात्रों में होड़ है लेकिन देश के विकास के लिए बाकी 95 प्रतिशत कॉलेजों को नजरंदाज नहीं किया जा सकता।

हमें विश्वस्तरीय संस्थान खड़े करने के लिए ऐसी राष्ट्रीय नीति की जरूरत है, जो गुणवत्ता, पारदर्शिता, स्वायत्तता, विकेंद्रीकरण, जवाबदेही, विविधता और विश्व दृष्टि जैसे मूल्यों पर आधारित हों। लेकिन दुर्भाग्य से देश में शिक्षा का हाल ठीक नहीं है। अगर समय रहते इस पर ध्यान नहीं दिया गया तो इसके गंभीर परिणाम भुगतने पड़ेंगे। देश की मौजूदा नीतियों के आधार पर उच्च और तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में सुधार असंभव है। आज देश के युवाओं को ऐसा तकनीकी ज्ञान मिले जो व्यवहारिक और रोजगारपरक हो, जिसे हम देश की परिस्थितियों के हिसाब से प्रयोग कर सकें। ❑

सफेद हाथी बन रहा यूजीसी

❑ प्रो. एस.पी. सिंह

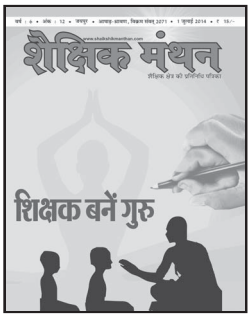

एक यक्ष प्रश्न है कि यूजीसी की इस अफसोसनाक गिरावट के वजूहात क्या हैं। आलीशान वेतनमान, भव्य सेवांत लाभ, बेहतरीन पर पूर्णरूपेण अवांछित प्रोन्नति की अपार संभावनाएं, सेवा अवधि का स्वर्णिम विस्तार, मनोरंजन से परिपूर्ण विलासी विदेशी यात्राओं की खूबसूरत संभावनाएं, अकादमिक मूल्यांकन की संपूर्ण समाप्ति-यूजीसी ने कौन सा सुख विश्वविद्यालयी प्राध्यापकों को उपलब्ध नहीं कराया है। शोधकर्म के दायित्व और शिक्षण कर्म की पवित्रता से बिल्कुल आजाद शिक्षकों को यूजीसी ने निर्धन करदाताओं से वसूली गई रकम की बदौलत सरस्वती के इन पुजारियों की तपश्चर्या के लिए और भी कितने इंतजामात किये हैं। तरह-तरह के फेलोशिप, कॅरियर एडवांसमैंट स्कीम्स, रिसर्च प्रोजेक्ट, फील्ड ट्रिप्स, रिफ्रेशर कोर्स, सेमिनार और सिंपोजियम वर्कशॉप और कालबद्ध प्रोन्नतियों की बहारें।

नई दिल्ली में बहादुर शाह जफर मार्ग पर यूनिवर्सिटी ग्रांट्स कमीशन (यूजीसी) की भव्य और विशाल इमारत खड़ी है मगर बेहद निस्तेज और बेतरह-बेजान कई विवादों में घिरी हुई यह संस्था कभी अध्यक्ष पद पर प्रो. वेदप्रकाश की नियुक्ति को लेकर तो कभी तीन वर्षों की खातिर कैग द्वारा प्रस्तुत निहायत आपत्तिजनक अंकेक्षण प्रतिवेदन को लेकर समाचार पत्रों की सुर्खियों में छाई ही रहती है। यह सफेद हाथी सालाना प्राय: तेरह हजार करोड़ रुपयों का चारा खाता है और पचा जाता है अरबों रुपयों का घोटाला, निगल जाता है संसदीय कानून 1956 के तहत गठित नियम, परिनियमों को। कितनी बड़ी विडम्बना है कि पं. नेहरू द्वारा कल्पित तथा डा. राधाकृष्णन द्वारा सुविचारित इस संस्थान को 28 दिसम्बर 1953 में मौलाना अब्दुल कलाम आजाद ने उद्घाटित किया मगर अपनी साठवीं सालगिरह मनाते-मनाते यह संस्थान अब दम तोडऩे लगा है। यह ज्ञातव्य है कि विश्व रैंकिंग में सर्वश्रेष्ठ दो सौ संस्थानों में से एक भी विश्वविद्यालय भारत सरकार द्वारा संचालित यूजीसी के अधीनस्थ नहीं है, जबकि पूर्वी और दक्षिण-पूर्व एशिया के निहायत छोटे-छोटे देशों के कई विश्वविद्यालय इस सूची में जगह बनाने में सफल रहे हैं। काबिलेगौर है कि इस भीमकाय यूजीसी से संबद्ध हैं राज्य सरकारों द्वारा प्रबंधित 312 विश्वविद्यालय, 120 डीम्ड विश्वविद्यालय, 45 केंद्रीय विश्वविद्यालय, निजी परंतु अनुमोदन प्राप्त 173 विश्वविद्यालय। यूजीसी से मान्यता प्राप्त प्राय: 6000 महाविद्यालय हैं। देश में कई प्रकार के महाविद्यालयों की संख्या 31000 से भी ज्यादा है।

एक यक्ष प्रश्न है कि यूजीसी की इस अफसोसनाक गिरावट के वजूहात क्या हैं। आलीशान वेतनमान, भव्य सेवांत लाभ, बेहतरीन पर पूर्णरूपेण अवांछित प्रोन्नति की अपार संभावनाएं, सेवा अवधि का स्वर्णिम विस्तार, मनोरंजन से परिपूर्ण विलासी विदेशी यात्राओं की खूबसूरत संभावनाएं, अकादमिक मूल्यांकन की संपूर्ण समाप्ति-यूजीसी ने कौन सा सुख विश्वविद्यालयी प्राध्यापकों को उपलब्ध नहीं कराया है। शोधकर्म के दायित्व और शिक्षण कर्म की पवित्रता से बिल्कुल आजाद शिक्षकों को यूजीसी ने निर्धन करदाताओं से वसूली गई रकम की बदौलत सरस्वती के इन पुजारियों की तपश्चर्या के लिए और भी कितने इंतजामात किये हैं। तरह-तरह के फेलोशिप, कॅरियर एडवांसमैंट स्कीम्स, रिसर्च प्रोजेक्ट, फील्ड ट्रिप्स, रिफ्रेशर कोर्स, सेमिनार और सिंपोजियम वर्कशॉप और कालबद्ध प्रोन्नतियों की बहारें। राजनीतिक नेतृत्व ने उच्च शिक्षा का अवमूल्यन इस कदर कर दिया है कि खुद ही एसोसियेशन ऑफ इंडियन यूनिवर्सिटीज की मान्यताओं के तहत लगभग सारे मूल्य यूजीसी की मोहर के साथ-साथ तकरीबन खत्म हो चुके हैं।

वैसे तो यूजीसी का ग्राफ कभी भी आशाजनक नहीं रहा, मगर विगत तीन वर्षों में इसके क्षरण का आलम यह है कि 2010 से लेकर 2013 के बीच की तीन वर्षीय अवधि के अंकेक्षण प्रतिवेदन में हुए कई खुलासों से रूबरू होना लाजिमी सा हो गया है। काबिलेगौर है कि पूरे तीन वर्षों की अवधि में यूजीसी मुख्यालय ने अपना ही अंकेक्षण नहीं कराया है। गौरतलब है कि इसी अवधि में अध्यक्ष पद पर प्रो. वेदप्रकाश की गैरकानूनी बहाली, उनकी धर्मपत्नी की पीएचडी उपाधि को लेकर उठे विवादों और किसी विश्वविद्यालय के कुलसचिव पर हुई उनकी अनियमित नियुक्ति में बरती गई विसंगतियों के साथ-साथ वर्तमान अध्यक्ष के द्वारा इस संस्थान के कई कर्मठ एवं प्रतिभाशाली पदाधिकारियों द्वारा किए जा रहे विरोध के फलस्वरूप विभिन्न न्यायालयों में अनेकानेक मुकद्दमें दायर हो गए हैं। कैग की रिपोर्ट के अनुसार इन मुकद्दमों की पैरवी में प्रो. वेदप्रकाश ने प्राय: 85 करोड़ रुपए लुटा दिए हैं। इनके कार्यकाल में सृजित पदों पर नियमानुसार बहाली करने के बजाय भारी संख्या में कृपाकांक्षी मुलाजिमों के साथ-साथ फर्जी

अफसरों की नियुक्ति के नाम पर संस्थान को प्रतिमाह करोड़ों रुपयों का चूना लगाया जा रहा है।

और तो और दिल्ली विश्वविद्यालय के प्राय: 60 से भी ज्यादा महाविद्यालयों के अरबों रुपयों के विकासानुदान को मामूली तकनीकी कारणों को लेकर लंबित रखा गया है। यूजीसी पुस्तकालय के एक छोटे से कमरे में विद्वतजनों के लिए संग्रहीत बीस हजार धूल धूसरित ग्रंथ अब हौले-हौले दीमकों का भोजन बन रहे हैं। यहां यह भी ध्याननीय है कि प्रो. वेदप्रकाश द्वारा बरती गई अनियमितताओं की मुखालफत करने वाले कई मेधावी तथा उच्च पदाधिकारियों को लांछित, प्रताड़ित और दंडित किया गया। स्वयं अध्यक्ष पद पर बिल्कुल गैरकानूनी रूप में काबिज प्रो. वेदप्रकाश ने पूर्व सरकार की सत्कृपा से विगत प्राय: तेरह वर्षों की अवधि में कई शीर्ष पदों को सुशोभित किया। मूल रूप से स्कूली शिक्षा के प्रबंधन से जुड़े प्रो. वेदप्रकाश ने दो-दो बार यूजीसी के उपाध्यक्ष का पद प्राप्त कर लिया। इतना ही नहीं यूजीसी एक्ट की धारा संख्या 6 का सर्वथा उल्लंघन करते हुए उन्होंने अध्यक्ष का पद भी हासिल कर लिया। इस कानून में स्पष्ट लिखा है कि कोई भी अध्यक्ष, उपाध्यक्ष अथवा सदस्य दो कार्यकालों की समाप्ति के बाद फिर से इस संस्थान में किसी भी पद पर पुनर्नियुक्त नहीं किया जा सकेगा। यहां तक कि उन्हें मंत्रिमंडलीय नियुक्ति समिति के अनुमोदन के बगैर नियुक्त किया गया। इन्हीं दिनों उन्होंने एनसीईआरटी में वर्षों की अपनी स्थाई सेवा को गैरकानूनी ढंग से यूजीसी में उपाध्यक्ष के पद पर अंतर्लीन कराते हुए वे यूजीसी के अधिकारी भी बन गए जो गैरकानूनी है। और तो और उन्होंने यूजीसी से एनसीईआरटी के नियमानुसार 62 वर्षों की उम्र में सेवानिवृति प्राप्त कर ली जबकि अंतर्लीनीकरण के बाद वे बन बैठे यूजीसी अधिकारी जहां सेवानिवृत्ति की उम्र है साठ वर्ष। प्रो. वेदप्रकाश ने पुनर्नियुक्ति और प्रोन्नति के क्षेत्र में कई कीर्तिमान हासिल किए हैं। बहुत गौरतलब है यह तथ्य कि यूजीसी अध्यक्ष पद के लिए किए गए विज्ञापनोपरांत मनोनयन एवं अतंर्वीक्षा जैसी कई औपचारिकताओं के पश्चात पद पर चयन हेतु जो सूची बनी उनमें प्रो. वेदप्रकाश का नाम ही नहीं था मगर मेधा के आधार पर चयनित दो उम्मीदवारों को गैरकानूनी तौर पर नाकाबिल साबित करने के उद्देश्य से एक पूर्व संघीय मंत्री ने पूर्व प्रधानमंत्री को गोपनीय पत्र तक लिख डाला। सतर्कता विभाग से हरी झंडी मिल जाने के बावजूद इस मेधा सूची को स्थगित कर दिया गया। प्रो. वेदप्रकाश को पूर्व शिक्षा मंत्री का पूर्ण आशीर्वाद प्राप्त था। पिछले दरवाजे से प्रवेश कराने हेतु अध्यक्ष पद को पुनर्विज्ञापित किया गया और यहां तक कि मेधा सूची का दीर्घीकरण कर दिया गया। आठ नए आवेदन स्वीकृत हुए। नई मेधा सूची बनी वर्णमाला के मुताबिक न कि प्रधानमंत्री द्वारा वांछित प्राथमिकता के आधार पर। नियुक्ति प्रक्रिया में संलग्न सर्वोच्च प्राधिकारों को संसदीय कानून के अंतर्गत गठित यूजीसी के एतद् विषयक नियम-परिनियम की कोई भी जानकारी मुहैया नहीं कराई गई और हालिया आम निर्वाचनों के बिल्कुल मध्य में ही प्रो. वेदप्रकाश को यूजीसी का अध्यक्ष पद पूर्व शिक्षामंत्री ने हंसते-हंसते प्रदान कर दिया। आवश्यकता है पूरे उपर्युक्त प्रकरण की सीबीआई अथवा सीवीसी द्वारा सघन जांच की ताकि समस्त अनियमितताओं को बेपर्दा किया जा सके। विश्वास किया जाता है कि नए प्रधानमंत्री के द्वारा एक सार्वजनिक जांच किए जाने के बाद सारे संबद्ध पक्षों को सम्मिलित करते हुए एक जांच समिति के गठनोपरांत स्थिति स्वत: स्पष्ट हो जाएगी। ❑

(लेखक ऑक्सफोर्ड, लंदन, हेल तथा हार्वर्ड विश्वविद्यालय में विजिटिंग फैलो रहे हैं)

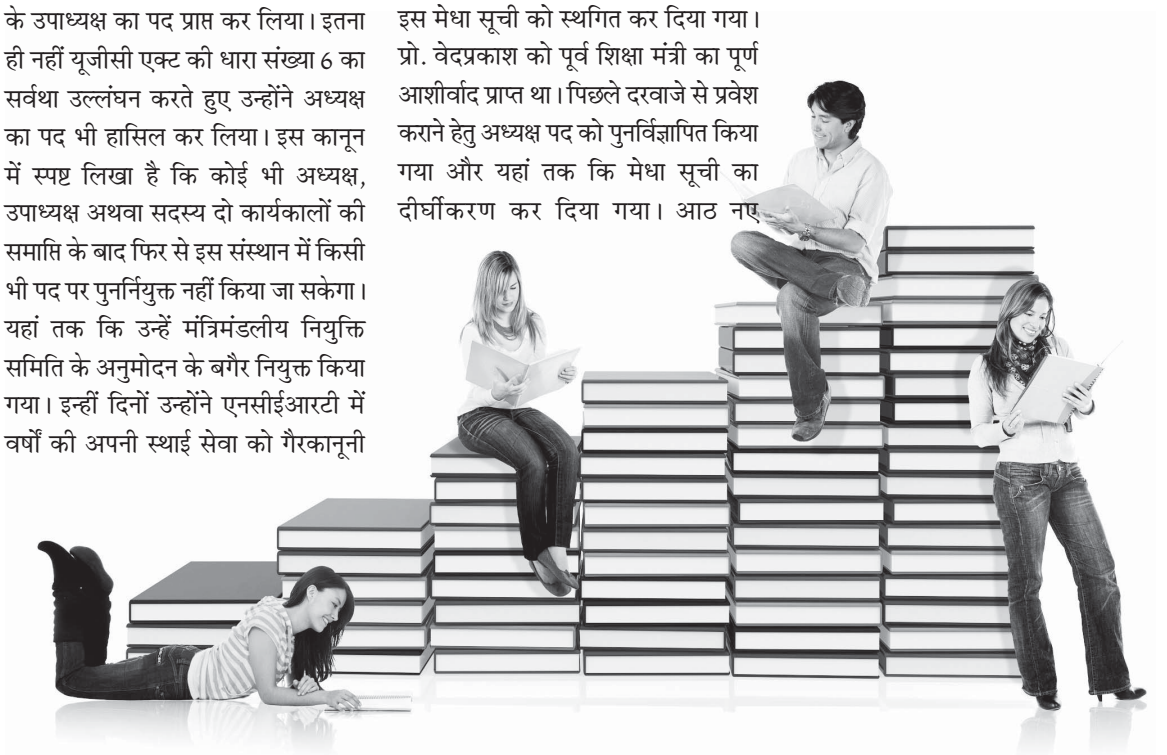

शिक्षा को बाजार भरोसे मत छोड़िए

❑ अनिल सद्गोपाल

शिक्षा के क्षेत्र में निजीकरण के बढ़ते दखल ने वंचित और दलित तबकों की शिक्षा पर सबसे ज्यादा असर डाला है। सरकारी आंकड़ों के मुताबिक देश के कुल 18 प्रतिशत छात्र ही 12वीं कक्षा तक पहुंच पाते हैं। दलित और आदिवासी छात्रों के मामले में यह प्रतिशत क्रमशः आठ और छह है तथा अल्पसंख्यक और पिछड़े वर्ग के छात्रों में दस है। आगे ऐसी व्यवस्था को बढ़ावा न मिले, इसके लिए जरूरी है कि मौजूदा सरकार समान स्कूल व्यवस्था की नीति अपनाए। हमारे संवैधानिक मूल्य भी इस बात पर फोकस करते हैं कि सबको समान शिक्षा मिले दसवीं और बारहवीं के परीक्षा परिणाम करीब-करीब सभी बोर्डों के आ चुके हैं। पिछले महीने भर से विद्यार्थी इसे लेकर तनाव का सामना कर रहे थे। पर क्या आपको लगता है कि हमारे छात्रों के सिर से परीक्षा का भूत खत्म हो गया है। शायद नहीं। इस मामले में एनसीईआरटी और सीबीएसई की कोशिशें एक हद तक ही कामयाब हो पाई हैं। जब तक सरकार की शिक्षा नीति में बदलाव नहीं होता, ऐसी समस्याओं से मुक्ति नहीं मिलने वाली। रिजल्ट के बाद भी बच्चे बेहतर शिक्षण संस्थानों, स्कूल-कॉलेजों में दाखिले की होड़ में तनावग्रस्त होते हैं। बच्चों के सामने यह तनाव भी है कि कैसे अपने मनपसंद विषय (संकाय) को लिया जाए। दाखिले की व्यवस्था ऐसी है कि 80-85 अंक लाने के बावजूद आप एक तथाकथित अच्छे कॉलेज में अपने पसंद के विषय में दाखिला नहीं ले सकते। सवाल यह है कि ऐसी स्थिति क्यों आई है? दरअसल हमारे समाज में प्रतिभा की समझ ही नहीं है और न ही शिक्षण व्यवस्था इस बात की पहल करती दिख रही है कि हम प्रतिभा का सही मूल्यांकन कर पाएं और प्रतिभाशाली बच्चों को सही राह दे सकें।

दूसरी ओर सरकार की शिक्षा नीति ऐसी है कि वह योग्य शिक्षक की व्यवस्था भी नहीं कर पा रही है। फिर प्रवेश के लिए तय हमारे मानक में, जो सही शिक्षा व्यवस्था के अभाव में उपजे हैं कहीं न कहीं खामियां हैं। इसमें अंकों की ऐसी होड़ को बढ़ावा मिला है जो अनुचित है तथा प्रतिभा के गलत आंकलन को बढ़ावा देती है। फिर इससे राज्य बोर्ड के छात्र वैसे विश्वविद्यालयों में दाखिला नहीं ले पाते जहां अंकों के आधार पर नामांकन होता है। कई राज्य बोर्ड के प्रतिभावान छात्र दिल्ली विवि के हिंदू, सेंट स्टीफन और करोड़ीमल जैसे कॉलेजों में अधिकांश विषयों में दाखिला नहीं ले पाएंगे। जाहिर है, यह उनकी प्रतिभा का असम्मान है लेकिन सोचने योग्य बात है कि इसके लिए आप दोष किसी विश्वविद्यालय के प्रबंधन को नहीं दे सकते। प्रतिभा को लेकर मजाक सी बनती इस स्थिति से बचने के लिए जरूरी है कि राष्ट्रीय स्तर पर एक ही तरह की शिक्षा हो या अंक देने

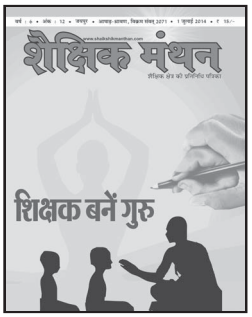

सरकारी स्कूली शिक्षा ध्वस्त हो रही है और निजी स्कूलों को बढ़ावा मिल रहा है। निजी स्कूल पैसे के पीछे पड़े हैं इसलिए कइयों के लिए वहां दाखिला ले पाना दूर की कौड़ी है। शिक्षा की दुनिया की विसंगतियां दूर करनी हैं तो समान शिक्षा प्रणाली लागू करनी ही होगी। सरकार की दोहरी शिक्षा प्रणाली से भारत और इंडिया का विभाजन साफ दिखने लगा है। यह खाई ज्यों-ज्यों गहरी और चौड़ी होगी, अनेक समस्याएं खड़ी करेंगी। समाज में आक्रोश बढ़ेगा और लोग उग्र कदम उठाने से भी नहीं हिचकेंगे। यूनेस्को की एजुकेशन फॉर ऑन ग्लोबल मॉनीटरिंग रिपोर्ट 2013-14 बताती है कि हमारे देश में स्कूल जाने के बावजूद 90 प्रतिशत बच्चे कुछ नहीं सीख पाते। 30 प्रतिशत बच्चे पांच-छह साल की स्कूली पढ़ाई के बावजूद सामान्य जोड़-घटाव भी नहीं जानते। ग्रामीण महिलाओं की हालत और भी बुरी है। अच्छे नंबर लाने वाले विद्यार्थियों के साथ भी कई मायनों में ऐसा ही है। वे व्यावहारिक शिक्षा के मामले में कहीं नहीं ठहरते। उनकी तथाकथित कामयाबी रट्टामार व्यवस्था के कारण है। ऐसा होते हुए भी हम अच्छी शिक्षा का दंभ भरें तो यह मजाक ही है।

का सिस्टम सभी जगह समान बनाया जाए। देश भर में विश्वविद्यालय स्तर पर शिक्षा में सुधार हो ताकि हर राज्य के प्रतिभाशाली छात्रों को अपने क्षेत्र में ही अच्छी सुविधा युक्त शिक्षा हासिल हो सके। दिल्ली विश्वविद्यालय की बात करें तो यहां भी पांच-छह कॉलेजों में ही नामांकन की आपाधापी मचती है जबकि यहां करीब 80 कॉलेज हैं। यह भी गौर करने वाली बात है कि उच्च शिक्षा के लिए विश्वविद्यालयों का अभाव है और यह कमी कम से कम दोगुने विश्वविद्यालय खोल कर ही पूरी की जा सकती है। वैसे केंद्रीय विश्वविद्यालय में कॉलेज की संख्या बढ़ाना भी एक विकल्प है लेकिन शिक्षा की गुणवत्ता का ख्याल रखना होगा। फिर हमें यह भी समझना होगा कि शिक्षा को लेकर हम किस रास्ते पर जा रहे हैं? सिर्फ साक्षर बनना ही काफी नहीं और न ही सिर्फ 90 प्रतिशत नंबर लाना। असल चीज ज्ञान आधारित समाज है। ऐसा समाज, जहां समतामूलक शिक्षा हो। वह सबको हासिल हो और हर तरह की प्रतिभा को समान तौर पर विकास का अवसर मिले।

सरकार ने तो शिक्षा को बाजार के भरोसे छोड़ दिया है। शिक्षा जगत में लगातार निजी हस्तक्षेप बढ़ता जा रहा है। यूनेस्को की जिस रिपोर्ट में कहा गया है कि दुनिया में सबसे ज्यादा वयस्क निरक्षर भारत में हैं, वह उस सच की ओर इशारा करती है जिधर देखना भी सरकारी तंत्र को गवारा नहीं। रिपोर्ट में इस पर खास फोकस किया गया है कि अमीरों और गरीबों के बीच शैक्षणिक स्तर पर गहरी विषमता है। जो यह सोच रहे हैं कि रिपोर्ट तो वयस्क निरक्षरों पर है, वे गफलत में हैं। यूनेस्को की रिपोर्ट के अलावा भी समय-समय पर की गई अध्ययन रिपोर्ट बताती हैं कि शिक्षा की हालत कैसी है। आज बिहार जैसे राज्यों में स्कूलों से ड्राप आउट की दर 38 प्रतिशत है। झारखंड में तो यह दर 42 प्रतिशत है। महाराष्ट्र जो इस मोर्चे पर सबसे अव्वल है, वहां भी 15 प्रतिशत छात्र पढ़ाई बीच में ही छोड़ देते हैं। सरकारी स्कूली शिक्षा ध्वस्त हो रही है और निजी स्कूलों को बढ़ावा मिल रहा है। निजी स्कूल पैसे के पीछे पड़े हैं इसलिए कइयों के लिए वहां दाखिला ले पाना दूर की कौड़ी है। शिक्षा की दुनिया की विसंगतियां दूर करनी हैं तो समान शिक्षा प्रणाली लागू करनी ही होगी। सरकार की दोहरी शिक्षा प्रणाली से भारत और इंडिया का विभाजन साफ दिखने लगा है। यह खाई ज्यों-ज्यों गहरी और चौड़ी होगी, अनेक समस्याएं खड़ी करेंगी। समाज में आक्रोश बढ़ेगा और लोग उग्र कदम उठाने से भी नहीं हिचकेंगे।

यूनेस्को की एजुकेशन फॉर ऑन ग्लोबल मॉनीटरिंग रिपोर्ट 2013-14 बताती है कि हमारे देश में स्कूल जाने के बावजूद 90 प्रतिशत बच्चे कुछ नहीं सीख पाते। 30 प्रतिशत बच्चे पांच-छह साल की स्कूली पढ़ाई के बावजूद सामान्य जोड़-घटाव भी नहीं जानते। ग्रामीण महिलाओं की हालत और भी बुरी है। अच्छे नंबर लाने वाले विद्यार्थियों के साथ भी कई मायनों में ऐसा ही है। वे व्यावहारिक शिक्षा के मामले में कहीं नहीं ठहरते। उनकी तथाकथित कामयाबी रट्टामार व्यवस्था के कारण है। ऐसा होते हुए भी हम अच्छी शिक्षा का दंभ भरें तो यह मजाक ही है। देश का विशाल मध्यवर्ग सरकारी स्कूलों की ओर झांकना भी नहीं चाहता। सरकार भले मान रही हो कि वह एजुकेशन के मोर्चे पर काफी खर्च कर रही है, लेकिन ऐसा है नहीं। जैसे-जैसे भारत वैश्वीकरण की ओर आगे बढ़ा, सरकार शिक्षा को लेकर अपनी जिम्मेदारियों से पल्ला झाड़ती गई। 1990 में भारत शिक्षा पर सकल घरेलू उत्पाद का चार प्रतिशत खर्च करता था जो घटते-घटते आज 3 दशमलव 5 पर आ टिका है। कोठारी आयोग के अनुसार यह राशि छह प्रतिशत तय की गई थी। गौर करने वाली बात है कि यूनेस्को का सुझाव है कि 2015 और इसके बाद की योजनाओं पर सरकार को कुल सरकारी खर्च का 20 प्रतिशत हिस्सा खर्च करना चाहिए। यहां इस तथ्य पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि अब सरकार शिक्षा पर जो राशि खर्च करती रही है उसमें भी क्षेत्रीय विषमता दिखती है।

शिक्षा के क्षेत्र में निजीकरण के बढ़ते दखल ने वंचित और दलित तबकों की शिक्षा पर सबसे ज्यादा असर डाला है। सरकारी आंकड़ों के मुताबिक देश के कुल 18 प्रतिशत छात्र ही 12वीं कक्षा तक पहुंच पाते हैं। दलित और आदिवासी छात्रों के मामले में यह प्रतिशत क्रमशः आठ और छह है। अल्पसंख्यक और पिछड़े वर्ग के छात्रों में यह प्रतिशत 10 है। ऐसी भयावह स्थिति तब है जब सरकार शिक्षा के क्षेत्र में अपना व्यापक आधार मुहैया कराए हुए है। जो 18 प्रतिशत बच्चे बारहवीं तक पहुंच रहे हैं, उनकी संख्या और घटेगी। कारण उनमें से जो पैसे वाले होंगे निजी शिक्षण संस्थानों का भार वे ही उठा पाएंगे। मैं बार-बार पैसे वालों की शिक्षा-और गरीबों की शिक्षा पर इसलिए ध्यान कर रहा हूं कि आने वाले दिनों में यह समाज के लिए सबसे बड़ा खतरा बनने वाला है। आखिर जो लाखों खर्च कर नौकरी पाएंगे, वे इसे वसूलना भी तो चाहेंगे। आगे ऐसी व्यवस्था को बढ़ाव न मिले इसके लिए जरूरी है कि मौजूदा सरकार समान स्कूल व्यवस्था की नीति अपनाए। हमारे संवैधानिक मूल्य भी इस बात पर केन्द्रित करते हैं कि सबको समान शिक्षा मिले। अतीत में और आज भी जिन देशों ने इसे अपनाया, वहां बौद्धिक-शैक्षणिक तरक्की अधिक देखी गई है। अमेरिका, कनाडा, जर्मनी, फ्रांस, जापान जैसे पूंजीवदी देशों ने भी इसी व्यवस्था को अपनाया हुआ है। शायद उदारीकरण के बाद हम इस राह पर चले होते तो कोई रिपोर्ट हमारे मुंह पर तमाचा मारने की स्थिति में नहीं होती। वहां अंकों की मारकाट नहीं होती और न ही प्रतिभा का आंकलन नंबरों के आधार पर किया जाता। ❑

(लेखक जाने-माने शिक्षाविद् हैं)

भाषाई गुलामी से मुक्ति के संकेत

❑ प्रमोद भार्गव

यह पहला अवसर है जब एक राजनेता प्रधानमंत्री बनने के बाद उसी भाषा में काम करने को प्रयत्नशील है जिस भाषा में देश भर के मतदाताओं को संबोधित किया और उम्मीद से ज्यादा मत व समर्थन हासिल किया। भाजपा को मिले इस आशातीत स्पष्ट बहुमत के बाद भी यदि नौकरशाही के अंग्रेजी आतंक के आगे मोदी नतमस्तक हो जाते तो वे भी उसी रूढ़ परंपरा के शिकार माने जाते, जिसके कैदी अब तक सभी प्रधानमंत्री होते रहे हैं। सही अर्थों में मोदी की यह कोशिश नेहरू कालीन उस लौहकवच को भेदने की है जिसके प्रशासनिक ढांचे पर अंग्रेजी का आवरण चढ़ा हुआ है। मोदी ने राष्ट्रभाषा में वार्ता और कामकाज करने की प्रेरणा शायद गुजरात से ही निकले महात्मा गांधी से ली है, जिन्होंने आजादी के बाद सार्वजनिक घोषणा की थी कि 'लोगों से कह दो कि गांधी अंग्रेजी भूल गया है।'

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी सरकारी कार्य-संस्कृति बदलने में अद्भुत संकल्प शक्ति का परिचय दे रहे हैं। सबसे खास बात है कि वे थोथे उपदेश देने की बजाए बिना कोई ढिंढोरा पीटे काम करके दिखा रहे हैं। मोदी ने दुनिया के राजनेताओं के साथ और संयुक्त राष्ट्र संघ में हिंदी में बातचीत करने का निर्णय लिया है। हालांकि इसकी शुरुआत वे शपथ समारोह में भाग लेने भारत आए दक्षेस नेताओं से हिंदी में वार्तालाप करके कर चुके हैं। राष्ट्रभाषा की अस्मिता और संप्रभुता को स्थापित करने की मोदी ने जो शुरुआत की है, यह स्वाभिमान पिछले किसी प्रधानमंत्री ने इस तरह से प्रगट नहीं किया। इसी साल सितम्बर में अमेरिका में होने वाली संयुक्त राष्ट्र की बैठक को मोदी हिंदी में संबोधित करेंगे और अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा से जो द्विपक्षीय वार्ता होगी, उसे भी मोदी हिंदी में बातचीत करके ही आगे बढ़ाएंगे। जाहिर है, मोदी राजनयिक बैठकों में सैद्धांतिक रूप से हिंदी में बोलने की गौरवशाली परंपरा की बुनियाद रखते हैं तो वे ऐसा करने वाले पहले प्रधानमंत्री होंगे। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के 66-67 सालों में हमने देश के राष्ट्रीय स्वाभिमान को भाषाई मोर्चे पर असर दरकते ही देखा है। यह पहला अवसर है जब एक राजनेता प्रधानमंत्री बनने के बाद उसी भाषा में काम करने को प्रयत्नशील है जिस भाषा में देश भर के मतदाताओं को संबोधित किया और उम्मीद से ज्यादा मत व समर्थन हासिल किया। भाजपा को मिले इस आशातीत स्पष्ट बहुमत के बाद भी यदि नौकरशाही के अंग्रेजी आतंक के आगे मोदी नतमस्तक हो जाते तो वे भी उसी रूढ़ परंपरा के शिकार माने जाते, जिसके कैदी अब तक सभी प्रधानमंत्री होते रहे हैं। सही अर्थों में मोदी की यह कोशिश नेहरू कालीन उस लौहकवच को भेदने की है जिसके प्रशासनिक ढांचे पर अंग्रेजी का आवरण चढ़ा हुआ है। मोदी ने राष्ट्रभाषा में वार्ता और कामकाज करने की प्रेरणा शायद गुजरात से ही निकले महात्मा गांधी से ली है, जिन्होंने आजादी के बाद सार्वजनिक घोषणा की थी कि 'लोगों से कह दो कि गांधी अंग्रेजी भूल गया है।'

हम चार अक्टूबर, 1977 को संयुक्त राष्ट्रसंघ की सभा में अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा हिंदी में दिए भाषण पर फूले नहीं समाते। लेकिन नहीं भूलना चाहिए कि यह भाषण पहले अंग्रेजी में लिखा गया था, जिसका हिंदी अनुवाद अटल जी ने पढ़ा था। एक अन्य पूर्व प्रधानमंत्री नरसिंह राव तो कई देशी-विदेशी भाषाओं के जानकार थे, लेकिन अंग्रेजी दासता से वे भी मुक्त नहीं दिखे। जाहिर है, हमारे ज्यादातर नेता अंग्रेजी को लेकर हीनताबोध से घिरे रहे हैं। अब मोदी ने उम्मीद जगाई है कि तिरंगा झंडा, राष्ट्रगान और राष्ट्रगीत की तरह राष्ट्रभाषा भी वास्तविक अधिकार हासिल करेगी। हमें नहीं भूलना चाहिए कि जिस अंग्रेजी को हम सिर पर ढोते फिरते हैं, उसे भी अपने देश ब्रिटेन में स्थापित करने के लिए अंग्रेजों को फ्रेंच और लैटिन भाषाओं की गुलामी से संघर्ष करना पड़ा था। अंग्रेज तो अपने मकसद में सफल हो गए थे, लेकिन हमने भाषाई दासता मंजूर कर ली। यह एक ऐसी मानसिक गुलामी है जो आजादी मिलने के 67 साल बाद भी हमारे यहां कायम है। अंग्रेजी की औपनिवेशिक विकृति इसलिए बनी रही क्योंकि हमने ब्रितानी प्रशासन तंत्र को उसकी प्रशासनिक भाषा अंग्रेजी के साथ स्वीकार लिया। लिहाजा इस ढांचे को तोड़े बिना न तो हिंदी अपनी जगह बना सकती है और न ही क्षेत्रीय भाषाएं व बोलिया प्रांतों में पूरी तरह स्थापित हो सकती हैं।

अलबत्ता अंग्रेजी को जबरन प्रशासनिक भाषा के रूप में थोपे जाने के कारण हिंदी समेत संविधान की अनुसूची में शामिल 22 भाषाएं अपनी मूल जगह से विस्थापित हो रही हैं। ऐसे में प्रशासनिक स्तर पर अगर हिंदी को स्थापित करने का वातावरण बनता है तो निश्चित रूप से यह हिंदी और भारतीय भाषाओं के लिए शुभ संकेत है। यह बात बिल्कुल सही है कि फिलहाल हिंदी संविधान सम्मत राष्ट्रभाषा नहीं है। संविधान के अनुसार हिंदी देश की राजभाषा है। लेकिन इसका प्रचलन

राष्ट्रभाषा के रूप में ही है। हालांकि इसे आजादी के बाद 15 साल के भीतर अंग्रेजी को विस्थापित कर सरकारी कामकाज की भाषा बन जाना चाहिए था, लेकिन हिंदी के साथ अंग्रेजी में भी कामकाज करने की जो छूट 14 सितम्बर 1949 को दी गई, उससे संवैधानिक संकल्प पारित हो जाने के बावजूद पीछा नहीं छूटा। बल्कि कालांतर में अंग्रेजी का दखल इतना बढ़ता चला गया कि हिंदी सरकारी कामकाज और व्यवहार के स्तर पर लगातार उपेक्षा का शिकार होती रही है।

सिनेमा, टीवी, विज्ञापन और टीवी पर ही प्रसारित होने वाली संगीत प्रतियोगिताओं ने जरूर हिंदी को अहिंदी भाषी दूरांचलों से जोड़ने में अहम भूमिका निभाई। 2014 के आम चुनाव में जहां मोदी ने देशभर में चुनावी सभाओं को हिंदी में संबोधित किया, वहीं तमिलनाडु में हिंदी के प्रखर व मुखर विरोधी रहे एम करुणानिधि की पार्टी डीएमके ने भी हिंदी में पोस्टर-बैनर लगाकर प्रचार किया। दरअसल, आर्थिक उदारवाद के दौरान बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने अपने जो प्रतिष्ठान अहिंदी प्रदेशों के महानगरों में लगाए हैं, उनमें बड़ी संख्या में हिंदीभाषी राज्यों के युवा भी काम कर रहे हैं, जो अब इन राज्यों में मतदाता भी हैं। इन्हीं मतदाताओं को लुभाने के लिए तमिलनाडु, केरल, कर्नाटक, आंध्र व तेलंगाना में हिंदी में खूब प्रचार हुआ। जाहिर है, हिंदी की राजनीतिक स्वीकार्यता देशभर में बढ़ी है। इस स्वीकार्यता से यह संकेत भी मिलता है कि अब यदि हिंदी को राष्ट्रभाषा का दर्जा देने के संवैधानिक प्रयास मोदी सरकार करती है तो खासतौर से तमिलनाडु में वैसा विरोध देखने में नहीं आएगा जैसा पहले देखने में आता रहा है। अलबत्ता यह भारतीय भाषाओं के समन्वय का दौर भी है। क्योंकि हिंदी क्षेत्र से जो युवा अहिंदी क्षेत्रों में काम करने पहुंचे हैं, वे वहां की स्थानीय भाषाएं भी सीख रहे हैं।

तीर्थयात्रियों के लिए हिंदी पूरे देश में सनातन काल से बोलचाल की भाषा रही है और अब यही गुणात्मक पहल राजनीति और रोजगार के क्षेत्रों में भी हो रही है, जो हिंदी के फैलने व फलने-फूलने का शुभ लक्षण है। नियंत्रण होने के बावजूद हिंदी को विश्वभाषा इसलिए नहीं माना जाता क्योंकि वह संयुक्त राष्ट्र की आधिकारिक भाषा नहीं है। जबकि भाषा व बोली के रूप में प्रयोग किए जाने की दृष्टि से हिंदी विश्व में चीनी भाषा मंडारिन के बाद दूसरे स्थान पर है।

दुनिया के 150 देशों में हिंदी का जीवन के बहुआयामी क्षेत्रों में इस्तेमाल हो रहा है। 93 देशों में हिंदी के अध्ययन-अध्यापन का काम भी हो रहा है। इस लिहाज से हिंदी अंतरराष्ट्रीय भाषा है। जाहिर है, भारत की जनसंख्या और अनिवासी भारतीयों की संख्या के लिहाज से हिंदी विश्व की सबसे अधिक बोली व समझी जाने वाली भाषाओं में दूसरे स्थान पर है। बावजूद हिंदी को राष्ट्रसंघ में स्थान नहीं मिल रहा तो केवल इसलिए कि भारत से ठोस पहल नहीं हो रही है। बहरहाल नरेंद्र मोदी ने हिंदी को पहले अपने ही देश में यथोचित सम्मान दिलाने की जो पहल की है, इसी पहल की सफलता हिंदी के लिए संयुक्त राष्ट्र में उपस्थिति का मार्ग खोलेगी।❑

मानव संसाधन मंत्रालय के समक्ष चुनौतियां

❑ अश्विनी कुमार

शिक्षा का अधिकार और उच्च शिक्षा नरेन्द्र मोदी के लिए बहुत बड़ी चुनौती है। छोटे पर्दे की लोकप्रिय बहू स्मृति ईरानी ने मानव संसाधन मंत्रालय का पदभार संभाल कर कामकाज शुरू कर दिया है। पहले तो उन्हें पूर्ववर्ती सरकार द्वारा छोड़ी गई फाईलों को निपटाना पड़ेगा और फिर उन्हें स्कूल और उच्च शिक्षा की चुनौतियों का मुकाबला करना पड़ेगा। यह एक अच्छी बात है कि स्मृति ईरानी अभी से ही 8 आईआईटी स्थापित करने की दिशा में जुट गई हैं और इसके लिए फंड जुटाने के प्रयास भी उन्होंने शुरू कर दिये हैं। स्कूली शिक्षा के मामले में उत्तरप्रदेश, बिहार और पश्चिम बंगाल जैसे राज्यों में स्कूली शिक्षा का स्तर अच्छा नहीं है। शिक्षा में लगातार मानकों का स्तर गिरता जा रहा है। अच्छे और अनुभवी शिक्षकों का अभाव शिक्षा का अधिकार सफलतापूर्वक लागू करने की राह में बाधा है।

पूर्णकालिक शिक्षकों की बजाय तदर्थ शिक्षकों से काम चलाया जा रहा है। कई राज्यों को स्कूली शिक्षा के लिए अधिक कोष की जरूरत पड़ेगी। इसमें कोई संदेह नहीं कि मिड-डे मील व्यवस्था में सुधार की काफी गुंजाइश है। मिड-डे मील की गुणवत्ता को लेकर चलते विषाक्त भोजन परोसने से अनेक स्कूलों में बच्चों के बीमार होने की घटनाएं हो चुकी हैं।

केन्द्र और राज्य सरकारें मिलकर न जाने कितनी शिक्षा योजनाएं चला रही हैं। सर्वशिक्षा अभियान, कन्या शिक्षा अभियान आदि-आदि और इन सब पर भारी धनराशि भी खर्च होती है। भारत का दुर्भाग्य है कि हमने अपने शिक्षा क्षेत्र को निजी क्षेत्र के लिए बड़े बेतरतीब ढंग से खोला है। इन शिक्षा संस्थाओं के विभिन्न शुल्क क्या गरीब आदमी की पहुंच के भीतर हैं

मानव संसाधन मंत्री पूरी स्थिति से अवगत हैं। उन्हें पता है कि निजी प्रतिष्ठित स्कूलों और उच्च शिक्षण संस्थानों में दाखिले के लिए कितना धन देना पड़ता है। दिल्ली को लीजिए, यहां तो अभिभावकों को नर्सरी एडमिशन के लिए भी महासंग्राम लड़ना पड़ता है। किसी भी बच्चे का अपने सबसे करीबी स्कूल में दाखिला कराना

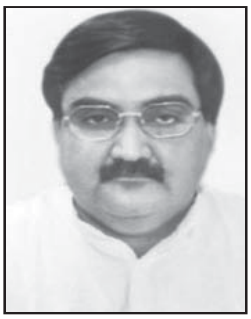

केन्द्र और राज्य सरकारें मिलकर न जाने कितनी शिक्षा योजनाएं चला रही हैं। सर्वशिक्षा अभियान, कन्या शिक्षा अभियान आदि-आदि और इन सब पर भारी धनराशि भी खर्च होती है। भारत का दुर्भाग्य है कि हमने अपने शिक्षा क्षेत्र को निजी क्षेत्र के लिए बड़े बेतरतीब ढंग से खोला है। इन शिक्षा संस्थाओं के विभिन्न शुल्क क्या गरीब आदमी की पहुंच के भीतर हैं मानव संसाधन मंत्री पूरी स्थिति से अवगत हैं। उन्हें पता है कि निजी प्रतिष्ठित स्कूलों और उच्च शिक्षण संस्थानों में दाखिले के लिए कितना धन देना पड़ता है। दिल्ली को लीजिए, यहां तो अभिभावकों को नर्सरी एडमिशन के लिए भी महासंग्राम लड़ना पड़ता है। किसी भी बच्चें का अपने सबसे करीबी स्कूल में दाखिला कराना सरकार की जिम्मेदारी होती है और स्कूलों का शिक्षा स्तर एक समान होता है मगर भारत के किसी भी छोटे शहर या गांव के स्कूल में शिक्षा स्तर क्या है, इसका अन्दाजा वहां जाकर आसानी से लगाया जा सकता है।

सरकार की जिम्मेदारी होती है और स्कूलों में शिक्षा स्तर एक समान होता है मगर भारत के किसी भी छोटे शहर या गांव के स्कूल में शिक्षा का स्तर क्या है, इसका अन्दाजा वहां जाकर आसानी से लगाया जा सकता है।

उच्च एवं तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र की ओर भी काफी अधिक ध्यान देने की जरूरत है। तकनीकी शिक्षा की गुणवत्ता और आईआईटी को लेकर कई बार बहस छिड़ चुकी है। यह निराशाजनक है कि उच्च शिक्षा के क्षेत्र में हमारी सभी अपेक्षाएं मात्र आईआईटी और गिने-चुने विश्वविद्यालयों से हैं। कुछ सर्वेक्षणों में पाया गया है कि उद्योग जगत के 65 प्रतिशत हिस्से को तकनीकी शिक्षा में सही स्नातक नहीं मिल रहे और न ही इन कॉलेजों से निकलने वाले छात्र उद्योगपतियों की कसौटी पर खरे उतर पा रहे हैं। वास्तव में ध्यान से देखा जाए तो उद्योग जगत की चिंता पूरी तरह से कारोबार से जुड़ी हुई है। उनका तकनीकी शिक्षा के बुनियादी और व्यावहारिक पक्ष से कोई लेना-देना नहीं, तभी वह कह रहे हैं कि उन्हें आईआईटी ऐसे स्नातक पैदा करे जिनका कार्पोरेट सेक्टर के लोग पूरा दोहन कर सकें। आज देश की ऐसी स्थिति है कि बुनियादी, तकनीकी और विज्ञान से कोई जुड़ना नहीं चाहता। आईआईटी के अधिकांश छात्र बी.टेक करने के बाद विदेश में काम करना चाहते हैं या किसी कार्पोरेट संस्था या प्रशासनिक सेवा में कार्य करना चाहते हैं। यह भी दुख:द है कि हमारे देश का कोई विश्वविद्यालय दुनिया के शीर्ष सौ विश्वविद्यालयों की सूची में शामिल नहीं। उच्च शिक्षा व्यवस्था में काफी कमियां हैं इसीलिए लाखों छात्र हर साल शिक्षा ग्रहण करने के लिए विदेशों में जाते हैं। ऐसा करने में उन्हें मोटी रकम खर्च करनी पड़ती है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग गठन इसलिए किया गया था कि मानकों का समन्वय, निर्धारण एवं अनुसरण किया जा सके। दूसरा उपलब्धियों की प्राप्ति के लिए विश्वविद्यालय एवं इससे सम्बद्ध कॉलेजों को निधियां मुहैया कराई जा सकें लेकिन भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद और राजनीति के चलते विश्वविद्यालयों का स्तर गिरा।

मानव संसाधन मंत्री स्मृति ईरानी के सामने काम का पहाड़ खड़ा है। देश में नई 8 आईआईटी स्थापित करने का उनका सपना अच्छा है लेकिन इनकी गुणवत्ता की ओर ध्यान देना होगा। उन्हें स्पष्ट - पारदर्शी नीति और नियामक फ्रेम वर्क तैयार करना होगा। यह भी सुनिश्चित करना होगा कि शिक्षा संस्थाएं योग्य और पूर्ण फैकल्टी के साथ आएं ताकि भारतीय छात्रों को विदेश जाने की जरूरत ही न पड़े। मुझे उम्मीद है कि स्मृति ईरानी शिक्षा के क्षेत्र में सुधार एवं परिवर्तन लाएंगी। ❑

(सम्पादक, पंजाब केसरी)

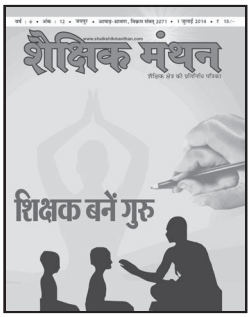

आज देश के प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों में मूलभूत सुविधाओं की कमी है। वहां विद्यार्थियों के लिए बैठने की जगह, यहां तक कि पीने का पानी, छात्राओं के लिए अलग शौचालय भी नहीं है। शिक्षक हमेशा घर के नजदीक तबादला कराने में नेताओं की चिरौरी में लगे रहते हैं और उनका विद्यार्थियों की पढ़ाई की तरफ ध्यान नहीं रहता। सबसे बड़ी बात यह कि स्कूल के कर्मचारी जनता की गाढ़ी कमाई से अपने-अपने परिवार की जरूरतों, भारी-भरकम वेतन और अन्य सुविधाएं तो सरकारी नौकरी से चाहता है, लेकिन अपने बच्चों की शिक्षा के लिए वह किसी निजी शिक्षण संस्थान में जाता है।

शिक्षा की सूरत

❑ के. सी. बब्बर

माननीय मानव संसाधन विकास मंत्री श्रीमती स्मृति ईरानी जी। आप आज उस पद पर आसीन हैं, जिसकी शोभा सबसे पहले आजाद भारत में मौलाना अब्दुल कलाम आजाद जैसे लोगों ने बढ़ाई। तब से लेकर आज तक भारत में शिक्षा प्रणाली में सुधार और प्राथमिक शिक्षा, उच्च शिक्षा को आगे बढ़ाने के लिए तरह-तरह के प्रयास होते रहे हैं। लेकिन आज जब हम देश में शिक्षा के स्तर को देखते हैं तो निराशाजनक तस्वीर नजर आती है। उच्च शोधों के मामलों में भारत की रैंकिंग पहले दो सौ विश्वविद्यालयों में भी नहीं है। इसके लिए मुझे ज्यादा पड़ताल की जरूरत इसलिए नहीं है कि मेरा अपना नजदीकी जो कंप्यूटर में शोध के लिए यूरोप और अमेरिका गया है, उससे मैंने जब भारत में शोधकार्य न करने के बारे में पूछा तो उसका जवाब था कि भारत में शोध की स्थितियां और बजट की हालत अनुकूल नहीं हैं। इसलिए मेरा आपसे आग्रह है कि अगर सरकार इस दिशा में ध्यान दे तो हालात कुछ सुधरें, ताकि हमें दूसरे देशों पर निर्भर न रहना पड़े।

कई बार देखने में आया है कि हमारे देश में शोधकर्ता वैज्ञानिक बहुत विषम परिस्थितियों में कार्य करने को मजबूर होते हैं। हालांकि तकनीकी क्षेत्र में भारत आगे बढ़ रहा है। लेकिन अगर इसे हम वैश्विक पैमाने पर नापने की ईमानदार कोशिश करें तो निराशा ही हाथ लगेगी। अब उच्च स्तर शोध पर ध्यान देने से पहले हमें सरकारी स्कूलों की तरफ ईमानदारी से सोचना होगा। प्राथमिक विद्यालय, जो देश में लाखों की संख्या में होंगे, सारे देश में उनकी हालत बिल्कुल जर्जर कही जा सकती है। जबकि प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों को किसी देश की शिक्षा व्यवस्था की रीढ़ के रूप में देखा जाता है। लेकिन पिछले काफी समय से इस दिशा में जिम्मेदारी से नहीं सोचा गया, जिसकी ओर कुछ सार्थक काम किए जाने की आवश्यकता है।

आज देश के प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों में मूलभूत सुविधाओं की कमी है। वहां विद्यार्थियों के लिए बैठने की जगह, यहां तक कि पीने का पानी, छात्राओं के लिए अलग शौचालय भी नहीं है। शिक्षक हमेशा घर के नजदीक तबादला कराने में नेताओं की चिरौरी में लगे रहते हैं और उनका विद्यार्थियों की पढ़ाई की तरफ ध्यान नहीं रहता। सबसे बड़ी बात यह कि स्कूल के कर्मचारी जनता की गाढ़ी कमाई से अपने-अपने परिवार

की जरूरतों, भारी-भरकम वेतन और अन्य सुविधाएं तो सरकारी नौकरी से चाहता है, लेकिन अपने बच्चों की शिक्षा के लिए वह किसी निजी शिक्षण संस्थान में जाता है।

मेरा मानना है कि प्राथमिक शिक्षा के ढांचे को एक सोची-समझी चाल के तहत ध्वस्त किया जा रहा है। किसी सरकारी विभाग में कार्यरत कर्मचारी, चाहे वह किसी भी पद पर हो, सरकार को अच्छी तरह से चलने देने के लिए जवाबदेह है तो वह सरकारी स्कूलों में अपने बच्चों को पढ़ाने में परेशानी महसूस क्यों करता है? लेकिन अपने बच्चों के लिए उन्हें सरकारी स्कूलों में पढ़ाई कबूल नहीं। वह सरकारी नौकरी के अपने वेतन से निजी स्कूलों को फीस देने के काबिल हो गया है, वह छठे और सातवें वेतन आयोग की रिपोर्ट जल्द से जल्द चाहता है, जो उसे जनता की खून-पसीने की कमाई से मिलने वाला है।

महोदया, मेरा विनम्र निवेदन है कि जो अधिकारी, कर्मचारी सरकार का अंग होते हुए भी उस पर विश्वास नहीं कर सकता, उसे सरकारी विभाग से तुरंत प्रभाव से अलग होकर निजी संस्थानों को अपनी सेवाएं देनी चाहिए, जिससे सरकारी और निजी संस्थाओं, दोनों का भला हो। अगर कर्मचारी, अधिकारियों के नौनिहाल भी उसी जगह पढ़ेंगे, तब न तो किसी शिक्षा सुधार आयोग की जरूरत रहेगी, न उसकी आने वाली रिपोर्ट के इंतजार की, न उस रिपोर्ट को किसी ठंडे बस्ते में डालने की।

प्रधानमंत्री संसद में अंधविश्वास रहित शिक्षा पर भाषण दे रहे थे। मुझे उम्मीद है कि जब आप इस आशय का प्रस्ताव सदन में रखेंगी तो सभी विपक्षी पार्टियां आपके इस प्रस्ताव का समर्थन करेंगी। मैं सभी विपक्षी दलों के लोगों को भी लिखूंगा कि अगर ऐसा प्रस्ताव आता है तो वे उसका समर्थन करें। इसके बाद जो लोग कल तक आपका इस्तीफा मांग रहे थे, उनके मुंह पर ताला जड़ा मिलेगा। ❑

गुरुवर शत शत तुम्हें प्रणाम

❑ भरत शर्मा 'भारत'

युगों युगों से सींच सींच कर, संस्कार की फसलों को ।
कुम्भकार बन सुघड़ बनाया, भोली भाली नस्लों को ।
चिंता छोड़ अभावों की जो, ज्ञान बाँटते रहे सदा ।
मौन मूक साधक की भाँति, किया देश का फर्ज़ अदा ।
महिमा कौन भुला सकता है, उन यायावर लोगों की ।
माया जिनको बाँध न पायी, सदा उपेक्षा भोगों की ।
आदर्शों को ओढ पहन कर, रहे हमेशा वो निष्काम ।
युग निर्माता कौशल दाता, गुरुवर शत शत तुम्हें प्रणाम ।।1 ।।
गुरुवर शत शत तुम्हें प्रणाम.....

राम-कृष्ण को जिसने ढाला, मर्यादा के साँचे में ।
वीर शिवा को साध लिया तब, रामदास ने खाँचे में ।
चन्द्रगुप्त-चाणक्य सरीखे, गुरु-शिष्यों की फौज बड़ी।
जिनके आह्वानों को सुनकर, मुर्दों में भी जान पड़ी ।
जिनके शंखनाद से गूंजा, सारा शहर शिकागो का ।
भारत के चिंतन विचार से, जागा भाग अभागों का ।
नत मस्तक दुनिया के मुख से, निकला केवल त्राहिमाम ।
परमहंस के उस सपूत ने, दिये जगत को नव आयाम ।। 2 ।।
गुरुवर शत शत तुम्हें प्रणाम.....

उस अतीत की पावन रीतें, आज दरकती जाती हैं ।
पछुवा की मनचली घटाएँ, पुरवा को बहकाती हैं ।
दोष नहीं है सारा उनका, कुछ तो हम भी दोषी हैं ।
हमने भी जन मानस रंजन, बातें वही परोसी हैं ।
कहते हैं इतिहास पुराना, अपने को दोहराता है ।
जहां चेतना हो कण-कण में, स्वर्ग वहां बन जाता है ।
उत्तरदायी लोगों सुन लो, 'भारत' का है यह पैगाम ।
विश्व गुरु कहलाने वाला, फिर से पाये वही मुकाम ।। 3 ।।
गुरुवर शत शत तुम्हें प्रणाम.....

(स्वतंत्र लेखक / कवि)

शिक्षक की जागरुकता से ही शैक्षिक उन्नयन

पूर्व राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने कहा है कि शिक्षक के लिये ज्ञानदान देने से बढ़कर कोई अन्य वस्तु उनके लिये आनन्द का विषय नहीं होना चाहिये। विद्यार्थी जीवन को मिशन देने के अलावा शिक्षक का कर्त्तव्य अपने विद्यार्थियों में आत्मविश्वास बढ़ाना भी होता है। शिक्षक अपने जीवन के प्रकाश से दूसरों के जीवन में उजाला ला सकता है। शिक्षक का कार्य क्षेत्र विस्तृत है, वह मनोवैज्ञानिक है, उत्प्रेरक है, स्वास्थ्यरक्षक है, सलाहकार है, खेलकूद का प्रशिक्षक है, अनुशासन सिखाने वाला होता है। शिक्षाविद् जे. कृष्णमूर्ती ने शिक्षक को शिक्षा को परिवर्तन का वाहक तथा माध्यम माना है। राजस्थान की राज्यपाल मार्गेट अल्वा ने शिक्षक के लिये उद्‌गार व्यक्त करते हुये कहा है कि 'शिक्षक का काम नौकरी करना नहीं है, यह एक मिशन है, यह एक कमिटमेंट है। समाज की चाबी शिक्षक के हाथ में मानी जाती है।

❑ **बजरंग प्रसाद मजेजी**

भारत की शिक्षा व्यवस्था पर स्वामी विवेकानन्द ने कहा है कि 'कभी-कभी मुझे लगता है कि आज शिक्षा के केन्द्र कहे जाने वाले संस्थान विपरीत दिशा में जा रहे हैं। शिक्षा मानव को मानवीयता से परिपूर्ण कर देवत्व की ओर ले जाने वाली विद्या है। पर, आज के स्कूल, कॉलेज तो दानवी प्रवृत्ति का पोषण कर रहे हैं। आज की शिक्षा प्रणाली सही अर्थों में अच्छे नागरिकों का निर्माण कर ही नहीं सकती। इसे जितना जल्दी संभव हो बदल देना होगा।' शिक्षा के माध्यम से जिस प्रकार के सद्‌गुणों युक्त देश के नागरिकों का निर्माण होना चाहिये, वैसा निर्माण करने में आज की शिक्षा पूर्णतः असफल है। डॉ. राधाकृष्णन का कथन है कि- आज की शिक्षा ने विद्यार्थियों को बौद्धिक दृष्टि से निर्धन, हृदय से कठोर तथा शारीरिक दृष्टि से बौना बना दिया है। देश में मैकाले शिक्षा के प्रादुर्भाव के बाद शिक्षा का दृष्टिकोण बदल गया है। आज भी जनसामान्य अंग्रेजी के मोह में देश की मौलिकता, भाषा, संस्कृति, शिक्षा पद्धति से दूर जा रहे हैं। वर्तमान में शिक्षा राजनीति की चेरी बन विषम परिस्थिति में बेबस है।

शिक्षक की महत्ता

पूर्व राष्ट्रपति ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने कहा है कि शिक्षक के लिये ज्ञानदान देने से बढ़कर कोई अन्य वस्तु उनके लिये आनन्द का विषय नहीं होना चाहिये। विद्यार्थी जीवन को मिशन देने के अलावा शिक्षक का कर्त्तव्य अपने विद्यार्थियों में आत्मविश्वास बढ़ाना भी होता है। शिक्षक अपने जीवन के प्रकाश से दूसरों के जीवन में उजाला ला सकता है। शिक्षक का कार्य क्षेत्र विस्तृत है, वह मनोवैज्ञानिक है, उत्प्रेरक है, स्वास्थ्यरक्षक है, सलाहकार है, खेलकूद का प्रशिक्षक है, अनुशासन सिखाने वाला होता है। शिक्षाविद् जे. कृष्णमूर्ती ने शिक्षक को शिक्षा को परिवर्तन का वाहक तथा माध्यम माना है। राजस्थान की राज्यपाल मार्गेट अल्वा ने शिक्षक के लिये उद्‌गार व्यक्त करते हुये कहा है कि 'शिक्षक का काम नौकरी करना नहीं है, यह एक मिशन है, यह एक कमिटमेंट है। समाज की चाबी शिक्षक के हाथ में मानी जाती है। बच्चों का जीवन, माइण्डसेट करना शिक्षक के हाथ में होता है।' शिक्षक के लिये कहा जाता है कि असम्भव जिसके शब्दकोष में नहीं हो, जिसमें उमंग और उत्साह का सागर

हमेशा लहराता हो, जो स्वयं सब कुछ करने का साहस रखता हो, जो स्वावलंबी हो, जो परिस्थितियों का दास नहीं हो अपितु निर्माता, नियंत्रक, स्वामी, मार्गदर्शक है, वही सफल शिक्षक है।

प्रेरणा लें सुपर 30 के शिक्षक आनन्द से-आनन्द कुमार ने सामान्य जन के बालकों को सुपर 30 की कोचिंग कार्यक्रम 2002 में स्थापना करके निर्धन छात्रों को आई.आई.टी, जे.ई.ई. का नि:शुल्क प्रशिक्षण ही नहीं देते बल्कि उनके आवास और भोजन की व्यवस्था भी करते हैं। पिछले 9 वर्षों में 270 विद्यार्थियों में से 212 को प्रवेश परीक्षा में सफलता दिलाई। इस वर्ष 30 में से 27 विद्यार्थियों को सफलता दिलाकर कीर्तिमान बनाया है।

वर्तमान परिस्थिति में शैक्षिक उन्नयन हेतु शिक्षकों से अपेक्षायें

देश में शिक्षा व्यवस्था में राजनैतिक हस्तक्षेप के कारण पाठ्यक्रम, शिक्षा का विस्तार एवं केन्द्रीय शिक्षा बजट न्यून होने के कारण शिक्षा क्षेत्र में गिरावट आ रही है। गुणवत्तापूर्ण शिक्षा के लिये शिक्षाविद्, राजनेता, अभिभावक चिन्तित हैं। इस विषम परिस्थिति में शिक्षा के वाहक शिक्षक पर नैतिक जिम्मेदारी है कि वह देश की शिक्षा व्यवस्था में स्वविवेक एवं अथक परिश्रम से राष्ट्रहित में शिक्षण कार्य के प्रति अपने उत्तरदायित्त्व का निर्वाह करे। शिक्षक को यह मानकर चलना चाहिये कि वह प्रोफेशन में नहीं अपितु मिशन पर है। बालक के शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक दृष्टि से विकसित करने का कार्य चुनौतिपूर्ण है। परन्तु, राष्ट्र के हित में शिक्षा का लक्ष्य लेकर, प्रत्येक शिक्षक को शिक्षा के हित में कार्य करने का व्रत लेना होगा। राष्ट्र की शिक्षकों से अपेक्षाएँ हैं, उनको कर्त्तव्यशील शिक्षक ही पूरी कर सकता है। इस दृष्टि से चुनौतिपूर्ण

अपेक्षाओं में शिक्षक को आत्मचिंतन कर, अपना लक्ष्य निर्धारण करना होगा, तभी शैक्षिक उन्नयन संभव है:-

- शिक्षक बनने में जीवन की धन्यता है, यह दृष्टिकोण अपनाकर कर्त्तव्य पालन करना होगा।
- विद्यार्थी की मनोस्थिति को परखकर, शिष्य को सन्मार्ग दिखाना, लक्ष्य होना चाहिये।
- राष्ट्रीय विचारों से ओतप्रोत साहित्य निर्माण कर, अध्ययन कर, शिक्षण कराना।
- भारतीय संस्कृति के रक्षण हेतु महापुरुषों के जीवन चरित्र का ज्ञान देना।
- विद्यार्थियों में मद्यपान, तम्बाकू, धुम्रपान जैसे अवगुणों से बचने हेतु प्रेरित करना।
- बालकों में राष्ट्र के प्रति उत्तरदायित्त्वों के निर्वाह करने के प्रति जागृत करना।
- छात्रों में बड़ों के प्रति शिष्टाचार, आदरभाव, नम्रता, सेवा का भाव उत्पन्न करना।
- स्वाध्याय कर नवीन टेक्नोलोजी, आविष्कारों की जानकारी बालकों को दे।
- विद्यार्थियों में राष्ट्रप्रेम, अनुशासन, कर्त्तव्यशीलता के गुणों का विकास करना।
- शिक्षण में देश के महापुरुषों, लेखकों, आविष्कारकों के बारे में जानकारी देना।
- शारीरिक क्षमता विकास हेतु खेलों में प्रवीण करना।
- शिक्षक स्वयं ज्ञाता हो, दाता हो, विधाता हो, तभी राष्ट्र निर्माण और संस्कृति संवर्द्धन-संरक्षण में सहायक होगा।
- शिक्षक में एक रूपता, एक रसता, स्पष्ट मंतव्य प्रकट करने वाला गुण होना चाहिये।
- अध्यापक की कथनी-करनी में अंतर नहीं होना चाहिये।
- शिक्षक का अनुकरण विद्यार्थी करता है, इस दृष्टि से शिक्षक का आचरण अनुकरणीय होना चाहिये। ❑

(कोषाध्यक्ष, अ.भा.रा.शै.महासंघ)

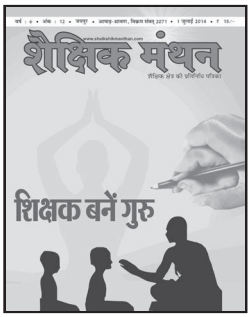

The last education policy was formulated in 1986. In 2014, this is a new India with new needs and new aspirations. Hence we will begin the process of consultation state-wise, region-wise, nationally, not only with government and bureaucracy but with all stakeholders. We will also invite international experts who can give us an insight from their experiences in the field of education, challenges they met with innovative ideas and what succeeded. After exhaustive deliberations, a new education policy will emerge, reflecting the aspirations of India now and opportunities in the next decade. It will be my endeavour to help India emerge as a knowledge-based economy. Education should be a cohesive policy.

Last edu policy came in '86' India needs a new one : Irani

❑ **Akshaya Mukul**

Smriti Irani's first 'interview' as HRD minister was scooped by two little girls from a Noida school. She spoke to TOI minutes after the two budding journalists grilled her - the HRD minister's first media interview after she took charge. Irani said a new education policy will emerge only after wide-ranging consultations with all stakeholders, especially students and parents. Excerpts:

Q: What is going to be the focus of HRD ministry?

A: I think that the Prime Minister's focus on skill development and his concern vis-a-vis the fact that we need to make our youth more employable is something that will reflect in the policies and work of the HRD ministry. The President's concern for the standards to be set up in our Central universities and institutes of higher learning is something which I endeavour to support and provide solution to. I also see a reduced inclination towards science and maths which is a personal worry for me. So my endeavour is to support an increased awareness or interest towards maths and science, particularly among girls, at primary, secondary and higher education levels.

Q: President's address promised IITs in all states. How are you going to implement it?

A: I am aware of the challenges of existing IITs/IIMs. In fact, on 28th and 29th of this month, I requested directors of IITs to come together to introspect current challenges and how we can provide through administrative reforms solutions to those challenges. I am also keen to develop contribution of the alumni of such institutions for better engagement with students to promote research. I will undertake a similar exercise with IIM directors. For any new initiative on policy, all stakeholders will be consulted. Policy will not be made in isolation.

Q: But there is a perception that

IITs only produce engineers and research is ignored. What will you do to change this?

A: I have understood concerns regarding research and fellowship in our country. HRD website is in the process of being refurbished which will help students to understand under what scheme increased grants in research, scholarship and fellowship will be given. I am also extremely keen to increase allocation towards research, keen to engage with industry captains so that there is an interface and support from industry for research. Our endeavour at MHRD is also to support research by students but increase awareness about how papers are to be published in journals of repute and how students pursue patents with regard to research.

Q: Why this emphasis on setting up a Central university on Himalayan Studies?

A: I will say time has come for an institute of international repute where modern science, technology, environmental concerns, issues related to hydrology, anthropology, geology, ethnic cultures in Himalayan regions -- which are issues of interest and concern for many not only in India but all over the world -- will be subject of study. I also foresee the need for international cooperation for such an endeavour in convergence with the efforts of ministry of external affairs.

Q: BJP had questioned UPA's move to appoint vice-chancellors of 12 Central universities. In most cases panel has been finalized. What are you going to do now?

A: In whatever process that is undertaken by HRD, due process of law will be ensured. Also position of VC is not only a position of academic excellence but also one with which the prestige of the institute is tied up. My endeavour is to ensure that institution's prestige, dignity and honour is not damaged.

Q: What about other policy initiatives?

A: Merits and demerits of the Right to Education, Rashtriya Madhyamik Shiksha Abhiyan and Rashtriya Uchchatar Shiksha Abhiyan are issues of discussion and debate between centre and states. Given the challenges faced by the states with regard to these policy initiatives, how we can better the performance of policies or how these policies can be revisited will be decided only after consultation. One-size-fits-all is not possible in a country as diverse as India with so many challenges.

Q: Are you looking at changing the curriculum?

A: The last education policy was formulated in 1986. In 2014, this is a new India with new needs and new aspirations. Hence we will begin the process of consultation state-wise, region-wise, nationally, not only with government and bureaucracy but with all stakeholders. We will also invite international experts who can give us an insight from their experiences in the field of education, challenges they met with innovative ideas and what succeeded. After exhaustive deliberations, a new education policy will emerge, reflecting the aspirations of India now and opportunities in the next decade. It will be my endeavour to help India emerge as a knowledge-based economy. Education should be a cohesive policy.

Q: What will be the fate of a host of bills left behind by UPA II?

A: Whichever legislation benefits students, helps bring about systemic changes which are needed infrastructurally and administratively to better education in the country will be pursued. Policy initiatives, as a citizen I feel, should not be looked upon from the political prism. India is best served when education is looked at from the prism of betterment of students. Policy needs to evolve in such a way that it keeps up with the pace of change in our country. Policy is made for the people. A policy cannot bring forth challenges for people but policy is initiated to better lives of people. If this means policy needs to be deliberated upon or revamped in some fashion, MHRD is open to such suggestions- be it from states or stakeholders. The biggest stakeholders are students and families who work hard to send their children to schools.

Q: There is an apprehension that textbooks will be saffronised.

A: Too much is attributed to me, without me speaking about it. President's speech and PM's resolve reflect what MHRD seeks to do.

Q: Your manifesto promised restructuring of UGC. Will it happen?

A: There have been many a promise in the manifesto which I hold dear. Promises were made to better lives of people. These promises shall be kept.

Q: What about Delhi University's Four-Year-Undergraduate Programme?

A: I see the role of MHRD if there is a blatant violation of law. I respect autonomy of institutions. Any other comment at this stage from me will be inappropriate. ❑

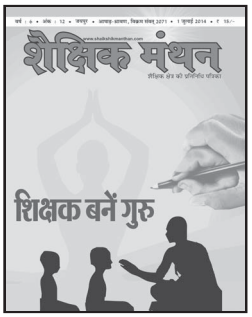

Post-Modi, right wing seeks to secure intellectual space

❑ **Deeptiman Tiwary**

Sitting in a small one room office in the 11, Ashoka Road complex of the BJP, Dr Anirban Ganguly, director of party-affiliated think tank Dr Syama Prasad Mookerjee Research Foundation, talks of some "excellent" Indegenist work (scholarly work that draws from ancient Indian history) that has just been published. He pulls out the books from a lean cabinet behind his desk. For a political thought that claims to find its roots in ancient India and has been fashioning mass movements much before India got independence, it makes for a rather thin library.

For all its worth, an intellectual discourse in rightwing political thought in modern India has been nearly absent. Due to the unchallenged lustre of the Nehruvian consensus and the pressure to conform to it under successive Congress governments, right-wing philosophy could not find enough number of adherents. Its own shortcomings, distrust of the West and the consequent insularity, was another hindrance.

While the Nehruvian stress helped Left liberal thought prosper in India's public institutions, the Indian right chose to focus grassroots mobilization. Consequently, the right in India could never come up with a scholarly body of work to articulate its vision in the intellectual sphere.

Ganguly likes to call it 'academic apartheid'. "Left has turned the idea of nationalism into a pejorative term. Nobody is ready to publish a book written by a nationalist thinker today. All social science institutes are dominated by Left liberals. They never give space to another stream of thought," he says, elaborating how R C Majumdar's reputed 11 volumes of 'The History and Culture of Indian People' had to be brought out without much government support.

All this may change soon though. Thanks to a BJP government favourably disposed to creating intellectual space for rightwing political thought. An evidence of this has been visible in the importance it has given to former bureaucrats and officers associated with rightwing institutions. Ajit Doval, Nripendra Misra and P K Mishra, who have all been given key positions in the government, have been associated with the Vivekananda International Foundation, a rightwing think tank established five years ago.

There is also hope that the government will push for inclusion of 'nationalist' thought in existing educational apparatus as well. "We need to have our own institutions. We need to nurture a corpus of intellectuals. But more importantly, there is a dire need for opening up of intellectual discourse, for creating a level playing field. This will have to begin with existing public institutions. There should not be a fear among scholars in a public institute that if they take a rightwing line, their promotion will be stopped," says Ganguly.

There are others in the right flank who think there would be little need to push nationalist thought as "it's an idea whose time has come". Shaurya Doval, director of India Foundation that rigorously articulated Narendra Modi's economic ideas in the run-up to the polls, says, "The burgeoning middle-class (at 400 million and counting) will fuel rightwing thought. After all, they have made a big contribution in Narendra Modi's victory. As the middle class acquires prosperity, it will think of identity

For all its worth, an intellectual discourse in rightwing political thought in modern India has been nearly absent. Due to the unchallenged lustre of the Nehruvian consensus and the pressure to conform to it under successive Congress governments, right-wing philosophy could not find enough number of adherents. Its own shortcomings, distrust of the West and the consequent insularity, was another hindrance. While the Nehruvian stress helped Left liberal thought prosper in India's public institutions, the Indian right chose to focus grassroots mobilization. Consequently, the right in India could never come up with a scholarly body of work to articulate its vision in the intellectual sphere.

which will help creation of an independent discourse."

Sociologist Dipankar Gupta, however, says challenging the well-established culture of Left liberal institutes may not be easy but space could be created in newer institutions. He, though, argues that there isn't a leftwing or rightwing political stream in India in the real sense of the term. "In the political stream for the last couple of decades now, there has been no Leftist thought in economy or strategic affairs. Rightwing has ruled there- be it a Congress or a BJP government. It's only in the socio-cultural sphere that rightwing is still trying to find space," he says.

There are others, however, who feel influencing institutions would be of little help. Atul Mishra, assistant professor at Central University of Gujarat, argues that experience indicates creating institutions with rightwing orientation would not necessarily help create intellectual discourse. "Historically, Indian institutions have rarely been sources of original insights on politics. During the initial decades of independence, for example, most institutions elaborated and articulated the Nehruvian consensus on foreign policy and domestic politics," says Mishra.

The only exception is sociologist Ashish Nandy who first said secularism had no cultural connect in India. Not surprisingly, the nationalists consider Mahatma Gandhi their biggest icon after Swami Vivekananda. "It would be wrong to say nationalists did not create an intellectual stream. Both Vivekananda and Gandhi wrote reams of literature. See how much Narendra Modi speaks of Gandhi," says J K Bajaj, director of Centre for Policy Studies that has brought out several books on "nationalist" thought.

There are others, however, who concede rightwing's disconnect with intellectual discourse. K G Suresh of Vivekananda International Foundation blames Leftist discrimination and the RSS's aversion to English for this. But he is hopeful of largescale change. "We have just published five volumes of 'History of Ancient India' in English. History has to be nationalized. The Left has been politically sidelined. It is now going to happen in the intellectual sphere. Not by discrimination, though," he says, adding, "Till now we were the fringe. Now it's their turn."

Bajaj, however, argues for empiricals taking over ideology in the sphere of social science research. "In the past 40-50 years, India has been intellectually barren, largely because research has been tethered to ideology. I hope once this government comes into its own, there will be less focus on ideology and more on what needs to be done in the sphere of research," he says.

Even as Bajaj's hope gels with what Modi has been saying throughout his campaign, Mishra sums up, "It's not so much about a new vision of politics for our times. The contemporary rightwing in India will argue that politics is not about vision but about management of human affairs. However, this is part of a global trend to which Indian politics, including that of the right, seems increasingly to be conforming."❑

Lessons for Liberals

❑ **T. K. Arun**

There is much that liberals can learn from the organized dedication of their opponents. For liberal politics to advance, it has to embrace an agenda of diverse cultural and material modernity, to be pursued with dedication and through multiple, ever active organizations

For India's liberals, Dinanath Batra is anathema. He should be a role model. Batra is a relentless campaigner for his cause of excising books, particularly school and college textbooks, of "what he considers to be distortions of Indian history and culture.

Dina Nath Batra

His 'Shiksha Bachao Andolan' fights a legal battle against offending material, his fellow travellers take to the path of agitation. He forced A K Ramanujan's celebrated essay on the Ramayana out Delhi University's syllabus and Penguin to pulp Wendy Doniger's book on Hinduism. Orient Blackswan has now decided to review further sales of a book it had published on sexual violence in communal riots in Ahmedabad since 1969, following Batra's legal complaint against one of their popular, college-level history textbooks.

Don't just fume, act

What is admirable about Mr Batra is his will to act on his beliefs and his perseverance. He has an organization to pursue his cause. It finds the money to hire the lawyers and marshal the evidence needed to wage his battle. In contrast, liberals fume over coffee, if not over cognac. And then get on with their lives, impoverished every passing day by an incremental illiberal shift in the public discourse.

The opponents of secular India work round the clock, seven days a week, 52 weeks a year and do not stop. They work among tribal people, run schools in rural areas and small towns, run charities that deliver "social service", act as community volunteers at religious functions that liberals sneer at. Activists of the Sangh Parivar are, indeed, like fish in the water — ubiquitous, at home and at unceasing work.

Secularists, in contrast, have no such energy , organization or passion driving them. They don't even know

The opponents of secular India work round the clock, seven days a week, 52 weeks a year and do not stop. They work among tribal people, run schools in rural areas and small towns, run charities that deliver "social service", act as community volunteers at religious functions that liberals sneer at. Activists of the Sangh Parivar are, indeed, like fish in the water — ubiquitous, at home and at unceasing work. Secularists, in contrast, have no such energy , organization or passion driving them. They don't even know what secular politics is. For example, Sonia Gandhi's little chat with Imam Bukhari of Delhi's Jama Masjid in the run-up to the elections is reported by her partymen as an attempt to prevent division of the "secular vote". Are Muslim votes the same as the secular vote?

what secular politics is. For example, Sonia Gandhi's little chat with Imam Bukhari of Delhi's Jama Masjid in the run-up to the elections is reported by her partymen as an attempt to prevent division of the "secular vote". Are Muslim votes the same as the secular vote?

Redefine secular & modern

There is nothing wrong with calling upon Muslims as a community to vote for a particular party. The Akalis do that to Sikhs. Mobilizing a community for itself is not communal. Communalism consists in mobilizing one community in opposition and hostility to another community. Since neither Sonia Gandhi nor the Imam was asking Muslims to vote the Congress in order to harm Hindus, there was nothing wrong with saying that her attempt was to canvas Muslim votes for the Congress. Calling Muslim votes the secular vote leads to huge problems.

As a small community , Muslims cannot bear the burden of India staying secular. That is the task of the Hindus, the majority community .

Secularists have to primarily persuade Hindus to stay secular. And in this task, they need to have clarity on their mission, besides organizations that work round the clock, such as, for example, to join legal battle with Dinanath Batra when he uses the law to intimidate publishers into censorship.

Secularism in the Indian context has to be redefined from the western ideal of separating state and religion. India's syncretic tradition, an open-ended, non-doctrinaire approach to spirituality that was widely popularized by the

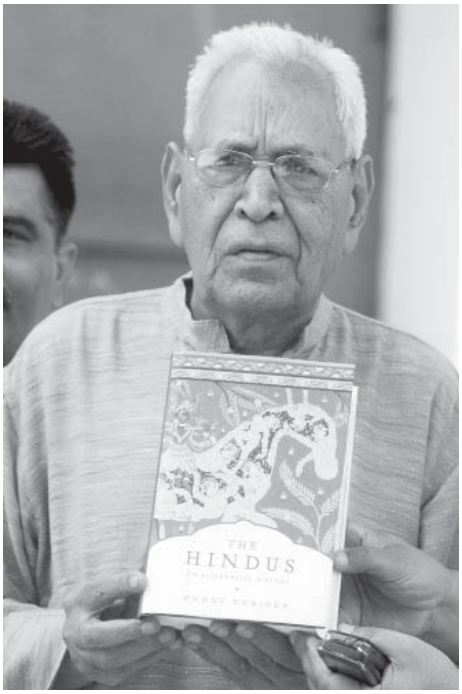

Bhakti movement and figures like Kabir, makes it possible for all faiths and their followers to coexist in peace, different but equal.

Traditional Hinduism does not recognize spiritual deviance, meaning there is no need for tolerance of deviant faiths. In actual practice, this theological permissiveness might have been violated on and off, but, by and large, polytheistic acceptance of diversity in spiritual pursuit has allowed India to become home to all the major religions of the world.

Deviance, in the traditional framework, subsists in violation of caste codes and for that there is little tolerance. And battling the evil of caste must become a revealed priority on the liberal agenda, instead of the passing nod to a peripheral problem it is today.

Like fish in the water

Liberals have to focus on modernity, seen not as violent rupture with the past to embrace everything western but as an organic process of change in which all that is healthy from India's tradition is retained and absorbed while the illiberal elements are rejected. For this, the liberals need to have more than a casual acquaintance, facilitated by Amar Chitra Katha, with tradition — vast, varied, hoary and multilingual as it is.

This means a decisive break with the fixation on English. A large swathe of liberal (and illiberal) opinion equates modernity with English-medium education. They leave their children to absorb Indian culture via Honey Singh's lyrics. Children who do not hear English spoken at home must have the opportunity, both to learn in the mother tongue and to master English, taught proficiently as a foreign language. This calls for a whole new politics of education.

Nor is modernity a question of culture alone. The economic structure must change and people move into modern occupations. This is what will kill caste, ultimately. When a section of liberals mindlessly oppose all attempts to build industry in the country as 'neoliberal' conspiracy or exploitation of tribals, they fail people's aspirations and push them towards the 'Gujarat model'. A constructive agenda for broad-based economic growth in a globalizing world is, in other words, an integral part of the liberal project.

The liberal focus cannot get stuck on Rahul Gandhi and his foibles. It must extend to continuous, multidimensional activism that strives for material and cultural modernity in every sphere of social life. Organisations must be set up, to be led, round the year, by people with the zeal, commitment and staying power of Dinanath Batra. ❑

'शाश्वत जीवन मूल्य' राष्ट्रीय कार्यशाला दिल्ली में सम्पन्न

शाश्वत जीवन मूल्यों की श्रेष्ठ परम्परा को पुन: प्रतिष्ठापित करने के क्रम में अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ द्वारा इस वर्ष से चलाये जाने वाले जनजागरण अभियान के प्रथम चरण में शिक्षकों के प्रशिक्षण हेतु एक राष्ट्रीय कार्यशाला का आयोजन 15 जून 2014 को दिल्ली में सम्पन्न हुआ। इसमें 20 राज्यों के 145 आमंत्रित शिक्षक बन्धु/बहिनें उपस्थित रहे। इस राष्ट्रीय कार्यशाला के उद्घाटन में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के मा. सह सरकार्यवाह डॉ. कृष्ण गोपाल जी ने अपने उद्बोधन में कहा कि देश संक्रमण काल से गुजर रहा है, उसमें शाश्वत जीवन मूल्य मानव की जीवन दृष्टि में प्रतिष्ठापित हों, इसकी महती आवश्यकता है। हमारे जीवन मूल्य पाश्चात्य जीवन मूल्यों से भिन्न है, इसे बताने की आवश्यकता है। भारत में जीवन मूल्य वे हैं जो अमूल्य हैं। यह देश की दृष्टि है और यह जीवन दृष्टि चिरन्तर है। पिछले कालखण्ड में ऐसी कई सुनामी आईं जो सम्पूर्ण सांस्कृतिक जीवन दृष्टि को ही निगल गई। जीवन मूल्यों को पुन: स्थापित करने के लिए अखित भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ को आध्यात्मिक भाव पैदा करना होगा और साक्षात का दर्शन कराना होगा। यह एकात्म दृष्टि से ही सम्भव है। आपने कहा कि शिक्षकों को जीवन मूल्यों की स्थापना के लिए छात्रों के साथ शाश्वत रिश्ता स्थापित करना होगा। सत्यनिष्ठा पर आधारित प्रामाणिक जीवन जीना होगा, छात्रों एवं समाज के अन्य वर्गों में एकात्म का भाव जगाना होगा एवं साक्षात् शिव का दर्शन कराना होगा और यह तब ही सम्भव होगा जब शिक्षक अपने आपको माता-पिता के स्थान पर रख कर व्यवहार करें।

पुनरुत्थान विद्यापीठ कर्णावती की संचालिका ताई इन्दुमति जी काटदरे द्वारा शाश्वत जीवन मूल्यों की पुन: स्थापना करने सम्बन्धी अनेक मौलिक मुद्दों पर चर्चा की। आपने स्पष्ट किया कि जीवन मूल्यों की स्थापना के लिए एक शिक्षक नाम के कर्मचारी को आचार्य बनना होगा और यह स्वप्रयास, स्वाध्याय, साधना, आत्मविश्वास, धर्म, समर्पण आदि से ही सम्भव है। इसके लिए आचार्यों को छात्रों में मन की एकाग्रता उत्पन्न करनी होगी। आचार्य एवं छात्र के मध्य एकात्म सम्बन्ध स्थापित करने होंगे, वैतनिक शिक्षक के स्थान पर राष्ट्रीय शिक्षक बनना होगा और शिक्षा से सामर्थ्य पैदा करनी होगी।

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के अखिल भारतीय सह सम्पर्क प्रमुख प्रो. अनिरुद्ध जी देशपाण्डे द्वारा चर्चा सत्र के दौरान कहा कि शाश्वत जीवन मूल्यों पर विचार करते समय छात्रों को अपने समक्ष रखना है। यह नित्य विचार करने की प्रक्रिया है। शाश्वत जीवन मूल्यों को लाने का साध्य जितना अच्छा है उतना ही अच्छा साधन भी होना चाहिए। इसकी कार्ययोजना में मन का महत्व बहुत है और एकात्म दर्शन में इसका हल निहित है। राष्ट्रीय कार्यशाला के समापन कार्यक्रम में प्रो. अनिरुद्ध देशपाण्डे जी ने कहा कि समाज परिवर्तन हेतु जीवन मूल्यों की स्थापना के लिए मस्तिष्क को ऊर्जावान बनाने, ज्ञान के विकास, आचरण के निर्माण एवं आत्मनिर्भरता की आवश्यकता है और यह उज्ज्वल प्रक्रिया स्थापित करने का कार्य अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ को करना है। महासंघ ने बहुत पराक्रमी विषय का चयन कर जनजागरण का अभियान हाथ में लिया है, मैं इसकी सफलता की कामना करता हूँ। इससे पूर्व महासंघ के संगठन मंत्री श्री महेन्द्र कपूर द्वारा इस वर्ष की कार्ययोजना पर प्रकाश डालते हुए कहा कि इस वर्ष इस राष्ट्रीय कार्यशाला के पश्चात् राज्यस्तरीय कार्यशाला, संभाग स्तरीय कार्यशाला, जिला स्तरीय कार्यशाला एवं ब्लॉक स्तरीय कार्यशाला आयोजित होगी। इनसे देश के प्रत्येक विद्यालय स्तर पर पहुंचा जायेगा।

अ. भा. राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की बैठक दिल्ली में सम्पन्न

दिनांक 14 जून 2014 को महासंघ की राष्ट्रीय कार्यकारिणी की सम्पन्न बैठक में 20 राज्यों के राज्य स्तरीय एवं विश्वविद्यालयी संगठनों के 80 प्रतिनिधियों ने अनेक विषयों पर विचार-विमर्श किया एवं निर्णय लिया। विभिन्न सम्बद्ध संगठनों के विशेष कार्यक्रमों की जानकारी प्राप्त की गई।

महिला सहभाग वृद्धि वर्ष की कार्ययोजना पर विचार कर निर्णय लिया गया कि सभी सम्बद्ध संगठनों द्वारा महिलाओं की निर्णय में भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए उन्हें अधिक अवसर प्रदान करने होंगे और हमें अपनी मानसिकता में परिवर्तन लाना होगा। सभी सम्बद्ध संगठन महिला सम्मेलनों का आयोजन करेंगे और महिलाओं को अपनी कार्यकारिणी में उपयुक्त स्थान प्रदान करेंगे। यह भी निर्णय लिया गया कि महिलाओं के कार्यक्रम पूरी तरह से महिलाओं द्वारा ही सम्पन्न हों।

शाश्वत जीवन मूल्यों के अभियान को इस वर्ष स्कूल स्तर पर ले जाने का निर्णय लिया गया। इसके लिए शिक्षकों को प्रशिक्षण के लिए अखिल भारतीय स्तर के अलावा राज्य स्तर, संभाग स्तर, जिला स्तर एवं ब्लॉक स्तर पर शाश्वत जीवन मूल्यों की कार्यशाला आयोजित होगी जिनके द्वारा शिक्षकों को प्रशिक्षित किया जायेगा। इस क्रम में राष्ट्रीय कार्यशाला का आयोजन 15 जून को दिल्ली में होगा।

प्रारम्भिक, माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा संवर्ग की शिक्षक समस्याओं के सम्बन्ध में शासन को ज्ञापन प्रस्तुत करेंगे एवं राष्ट्रीय स्तर पर एक एकीकृत ज्ञापन सरकार को दिया जायेगा। शिक्षक समस्याओं को ध्यान में रखते हुए सातवें वेतन आयोग को प्रस्तुत किये जाने ज्ञापन का एक ड्राफ्ट महासंघ के महामंत्री द्वारा सदन के समक्ष रखा गया। इस पर गहन विचार-विमर्श हुआ और कुछ और बिन्दुओं को सम्मलित करते हुए महासंघ द्वारा सातवें वेतन आयोग के समक्ष ज्ञापन प्रस्तुत किया जायेगा। ऐसा ही ज्ञापन कुछ अन्य बातों को सम्मिलित करते हुए सभी सम्बद्ध संगठनों एवं व्यक्तिगत रूप से कार्यकर्ताओं द्वारा भी प्रस्तुत किये जाने का निर्णय लिया गया। भावी कार्यक्रमों पर विचार करते हुए गुरुपूर्णिमा के अवसर पर गुरुवन्दन कार्यक्रमों को व्यापक स्तर पर सम्पन्न करने की योजना बनी एवं अखिल भारतीय स्तर पर शिक्षक सम्मान समारोह की रूपरेखा पर विचार किया गया।

राष्ट्रीय कार्यकारिणी के समारोप कार्यक्रम में बोलते हुए प्रो. अनिरुद्ध देशपाण्डे जी ने कहा कि वेतन एवं सुविधाओं के साथ जिम्मेदारी एवं कर्तव्य बोध की बात केवल राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ ही कर सकता है। महासंघ के कार्यक्रमों का क्षेत्र, शिक्षकों के साथ-साथ शिक्षार्थी एवं समाज भी है इसलिए संगठन को इस जिम्मेदारी को पूरी तरह से निर्वाह करना है। आपने कहा कि हमारे समाज में शिक्षक का स्थान माँ जैसा है अत: प्रत्येक शिक्षक को ऐसा ही आचरण करना होगा। कार्यकारिणी बैठक की अध्यक्षता उच्च शिक्षा संवर्ग के उपाध्यक्ष प्रो. रमेश चन्द्र सिन्हा ने की।

राष्ट्रीय कार्यकारिणी से पूर्व 13 जून 2014 को माध्यमिक संवर्ग की राष्ट्रीय कार्यसमिति की बैठक दिल्ली में संवर्ग के उपाध्यक्ष श्री टी. सुब्बाराव की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। इसमें संगठन की कार्य विस्तार की चर्चा की गई एवं उसकी योजना पर विचार किया गया। माध्यमिक संवर्ग के शिक्षकों की समस्याओं पर विचार किया गया एवं संवर्ग के शिक्षकों की समस्याओं का ज्ञापन शासन को दिये जाने का आग्रह राष्ट्रीय कार्यकारिणी को किया गया।